CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मलमल जामदानी

५७२७

डा० देवकी अहिवासी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मलमल जामदानी

डा० देवकी अहिवासी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक :—
श्री शंकर प्रेस, लंका, वाराणसी-५

4727

ब्लॉक :—
जौहरी ब्लाक वर्क्स, गोदौलिया, वाराणसी

State Museum Library Lucknow

प्रथम संस्करण—१९७७

पुस्तक प्राप्ति स्थान :—

द्वारा:—भारत कला भवन
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी-५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समर्पण

स्वर्गीय पूज्य पिता

श्री जगन्नाथ मुरलीधर अहिवासी

के

चरण कमलों में

सादर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय-सूची

	पृष्ठ संख्या
१—भूमिका	
२—सूती वस्त्रों का इतिहास	१-५
३—मलमल	७-३८
४—जामदानी	३९-५२
५—परिशिष्ठ	५३-५६
६—चित्र सूची	५७
७—पुस्तक सूची	५९-६२
८—चित्र-फलक	१-१२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमिका

मेरे शोध-प्रबन्ध "उत्तर भारतीय वस्त्र : एक अध्ययन" का एक अंश "रंगे एवं छपे वस्त्र" नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है, जिसको कला इतिहास के छात्र तथा विद्वत समाज ने प्रशंसित कर मेरा उत्साह बढ़ाया। अस्तु, दूसरा संशोधित अंश इस पुस्तक "मलमल–जामदानी" के रूप में प्रस्तुत है।

भारत में सूती वस्त्रों की प्राचीनता और उनके गौरवमय इतिहास से संसार परिचित है। ईसा से शताब्दियों पूर्व भारत में सूती वस्त्रों का निर्माण प्रारम्भ हो चुका था। भारतीय कारीगरों के लम्बे अनुभव, अद्वितीय कार्य-कुशलता, अटूट धैर्य एवं लगन का सर्वाधिक निखार हुआ रूप महीनतम मलमल और जामदानी जैसे वस्त्रों के आकार में सामने आया। वर्तमान काल में हथकर्घा उद्योग के क्षेत्र में अब ये पूर्णतः इतिहास की वस्तु बन कर रह गये हैं। विदेशी सरकार की स्वार्थ-परक व्यापार नीति, देशी राज्यों का पतन तथा लोगों की अभिरुचि में परिवर्तन जैसे अनेक कारणों ने युगों से चले आ रहे इस कलात्मक वस्त्र उद्योग को पूर्णतः समाप्त कर दिया। फलस्वरूप विश्व भर में अपनी पारदर्शिता, कोमलता और सूक्ष्मता के लिए प्रशंसित मलमल के कारीगरों को यह उद्योग छोड़कर अन्य उद्योग अपनाने के लिए विवश होना पड़ा।

कारीगरों और उनके संरक्षकों ने विविध प्रकार की मलमलों को विशेषता के आधार पर अनेक काव्यात्मक नाम दिये। कुछ प्रकार की मलमलों का नामकरण निर्माण स्थान, उपयोगिता और व्यक्ति विशेष के आधार पर हुआ। ये नाम तत्कालीन साहित्य, व्यापारिक विवरणों तथा लोकगीतों में बिखरे पड़े हैं। इन उल्लेखों से सफेद सूती वस्त्रों की इतनी विविधता पर आश्चर्य होता है। प्रस्तुत पुस्तक में मलमल के प्रमुख केन्द्र, उनके विविध प्रकार, नाम, उपयोग तथा विभिन्न युग के साहित्य में उल्लेख आदि का विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

अलंकृत मलमल या जामदानी के प्रमुख केन्द्र ढाका, टांडा, जायस, लखनऊ तथा बनारस रहे हैं। तृतीय अध्याय में इन केन्द्रों की चर्चा करते हुए वहाँ बनने वाली जामदानियों की विशेषता, बुनाई पद्धति, प्रकार तथा अलंकरण आदि का विस्तृत वर्णन दिया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस अवसर पर मैं अपने उन सभी गुरुजनों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिनके प्रोत्साहन और सुयोग्य मार्ग-दर्शन द्वारा मैं इस क्षेत्र में कुछ सफलता प्राप्त कर सकी । स्व० डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल, श्रद्धेय राय कृष्णदासजी तथा डा० राय आनन्द कृष्णजी की मैं विशेष रूप से ऋणी हूँ । साथ ही उन समस्त संग्रहालयों की भी आभारी हूँ, जिनसे मैंने अपने शोध-कार्य में सहायता ली । भारत कला भवन के वसन-संग्रह में सभी प्रकार के मलमल और जामदानियों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक अच्छा संग्रह है । इस संग्रह के संपर्क में रहने का लाभ मुझे विगत दस वर्षों से मिल रहा है, अतः इस विषय से सम्बन्धित जितनी अधिक जानकारी और अनुभव मुझे यहाँ से प्राप्त हुआ उतना अन्यत्र कठिन था । इसके लिए मैं भारत कला भवन की हृदय से आभारी हूँ ।

आवरण के चित्रांकन के लिए श्री कर्णमान सिंह, कलाकार, भारत कला भवन तथा छाया चित्रों के लिए श्री रामचन्द्र सिंह, फोटोग्राफर, भारत कला भवन को धन्यवाद देती हूँ । मेरे शोधकार्य तथा इस पुस्तक के प्रकाशन से संबंधित सहायता जिन मित्रों और परिचितों से मुझे मिली वे भी धन्यवाद के पात्र हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूती वस्त्रों का इतिहास

आज वस्त्र उद्योग में कपास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। सर जार्ज वाट लिखते हैं—"आज संसार में कृषि और व्यापार के क्षेत्र में कपास का इतना महत्वपूर्ण स्थान देखते हुए यह विश्वास करना कठिन है कि आज से केवल कुछ सौ वर्ष पूर्व तक इस कीमती सूत से संसार के सभ्य राष्ट्र पूर्णतः अपरिचित थे[1]।"

उपर्युक्त उक्ति भारत के सम्बन्ध में लागू नहीं होती। देशी-विदेशी सभी विद्वान इस बात से सहमत हैं कि भारत कपास का मूल स्थान है। सिन्धु घाटी के उत्खनन में सूती वस्त्र के अवशेष एक चांदी के बर्तन पर चिपके हुए मिले हैं[2]। यद्यपि बेबीलोन और मिस्र जैसे सिन्धु सभ्यता के समकालीन सभ्यता वाले देश भी इससे अपरिचित थे[3]। सिन्धु प्रदेश में कपास प्रमुखता से उत्पन्न होती थी। इस कारण यहाँ से जिन जिन देशों में कपास ले जायी गयी वहां-वहां इसे 'सिन्धु' नाम दे दिया गया। असुरबानी पाल (७८८-८२७ ई० पू०) के पुस्तकालय की एक क्यूनिफ़ोर्म टेबलेट में भारतीय कपास के लिए 'सिन्धु' शब्द उल्लिखित है[4]। डा० मोतीचन्द्र तथा कुछ अन्य विद्वान् भी इस बात से सहमत हैं कि बेबिलोनिया की भाषा में सिन्धु और यूनानी भाषा में 'सिडोन' शब्द सिन्धु प्रदेश में उत्पन्न होने वाली कपास के लिए ही प्रयुक्त होते थे[5]।

यह आश्चर्य की बात है कि यद्यपि सिन्धु सभ्यता के लोग कपास से परिचित थे परन्तु प्रारम्भिक वैदिक साहित्य और ब्राह्मणों में कपास का उल्लेख नहीं है[6]। इसका कारण यह

१—दि इम्पीरियल गजेटियर, ऑफ इण्डिया (न्यू एडिशन), चेप्टर ४, पृ० १६५ तथा कार्मशियल प्रोडक्ट्स ऑफ इण्डिया पृ० ५७०; कटना, कटान, कुतुन इत्यादि अरबी शब्दों से अंग्रेजी कॉटन बना। प्रारंभिक ग्रीक साहित्य में कर्पासस शब्द अतसी के बने वस्त्रों या महीन वस्त्रों के लिए प्रयुक्त होता था, कार्मशियल प्रोडक्ट्स ऑफ इण्डिया, पृ० ५७१

२—मार्शल, सर जॉन, मोहन जोदड़ो एण्ड इंडस वेली सिविलाइजेशन, १, पृ० ३३, प्लेट ९८

३—स्मिथ, ए० डी०—हैवेल, दि डाइड एण्ड प्रिंटेड कॉटनस आफ इंडिया, इडियन आर्ट एण्ड लेटर्स, भाग० १४, सं० २, पृ० १

४—इर्विन, जान, दि आर्ट आफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, पृ० २०१, फु० नो० ४

५—डा० मोतीचन्द्र, प्राचीन भारतीय वेश-भूषा, भूमिका, पृ० ३ तथा देखिए, हाथ की कताई-बुनाई, श्री रामदास गौड़ द्वारा अनुवादित, संवत् १९८३, पृ० २५

६—डा० मोतीचन्द्र प्रारम्भिक वैदिक साहित्य में कपास के उल्लेख का अभाव होने का दो कारण बतलाते हैं। एक तो यह कि आर्य जब भारत में पश्चिमी एशिया से आये तो सिन्धु सभ्यता पूर्णतः नष्ट हो चुकी थी। अतः आदि निवासियों के सम्पर्क में न आने से वे कपास से प्रारम्भ में अनभिज्ञ थे तथा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हो सकता है कि आर्य ठंडे प्रदेश से आये थे, जहाँ वर्ष भर ऊनी वस्त्र पहने जाते थे। परन्तु जैसे जैसे वे पूर्व की ओर बढ़े, गर्म जलवायु के कारण उन्हें सूती और रेशमी जैसे हल्के कपड़ों की आवश्यकता पड़ी।

कपास का सर्वप्रथम उल्लेख आश्वलायन[1] और लाट्यायन[2] श्रौत सूत्रों में हुआ है। इन उल्लेखों के अनुसार सोमयज्ञ के पौतृ को सूती कपड़ा दक्षिणा के रूप में दिया जाता था।

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल के मतानुसार पाणिनि ने कपास आच्छादन या सूती वस्त्र का उल्लेख एक सूत्र में किया है। पाणिनि द्वारा उल्लिखित 'इषीकातूल' का अर्थ वे सींक में लिपटी हुई कपास कहते हैं[3]। आचारांग सूत्र में उल्लिखित तूल (तूनकड)[4] भी कपास के लिए प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है।

अर्थशास्त्र में सूत्राध्यक्ष वाले अध्याय में कपास और तूल दोनों का उल्लेख हुआ है (उर्णावल्ककर्पासतूलशणक्षौमाणि)[5]। उसी प्रकार ७वीं शती में लिखे हर्षचरित में भी एक स्थान पर कपास और तूल एक साथ प्रयुक्त हुए हैं[6]। कुछ टीकाकारों ने यहाँ तूल का अर्थ सेमल की रुई किया है, परन्तु सेमल की रुई के रेशे इतने महीन और कमजोर होते हैं कि उससे सूत नहीं काता जा सकता। इस काल में प्रयुक्त तूल संभवतः कपास का ही कोई प्रकार था अथवा रुई (रेशे) के अर्थों में 'कर्पास तूल' का प्रयोग हुआ है। बाद के युगों में रुईदार गद्दों के लिए तूल शब्द (हंसतूल, तिलक मंजरी) प्रयुक्त हुआ है। रामायण में तूल शब्द गद्दे के अर्थ में आया है। एक स्थान पर कौटिल्य सीताध्यक्ष को अन्य धान, कन्दमूल, फूल, फल और रेशेदार वृक्षों के साथ कपास के बीज भी यथा समय सग्रहीत करने का आदेश देते हैं[7]। एक अन्य स्थान पर कौटिल्य ने सूती वस्त्रों का सूची दी है, जिससे सूती वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध केन्द्रों पर भी प्रकाश पड़ता है इस सूची के अनुसार मधुरा (मदुरा), अपरांतक (कोंकण), कलिंग, काशी, वंग (पूर्वी बंगाल), वत्सदेश (इलाहाबाद के आस-पास का प्रदेश), महिष देश (नर्मदा का तटवर्ती प्रदेश) इत्यादि सूती कपड़ों के लिए प्रसिद्ध थे (माधुरमापरान्तकं कलिङ्गकं काशिकं

पूर्व की ओर बढ़ने पर उन्हें इसका ज्ञान हुआ। दूसरा कारण यह बतलाते हैं कि संभवतः अनार्य संकृति से घृणा करने के कारण द्रविड़ों द्वारा प्रयुक्त सूती वस्त्रों का प्रयोग करने से हिचकिचाते थे। डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० १

१—आश्वलायन श्रौत सूत्र, २।३।४।१७

२—लाट्यायन श्रौत्र सूत्र २।६।१, ६।२।१४

३—पाणिनि, ४,३,१४३, डा० अग्रवाल, पा० कालीन भारतवर्ष, पृ० १४३

४—आचारांग सूत्र २, ५, १, १; डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० २६

५—अर्थशास्त्र २३, ४०, गणपति शास्त्री १, पृ० २०६

६—हर्षचरित, चतुर्थ उच्छ्वास

७—अर्थशास्त्र २४, ४१ ग० शा०, पृ० २८३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाङ्गकं, वात्सकं, माहिषकं च कर्पासिकं श्रेष्ठमिति[१])। अर्थशास्त्र की इस सूची से स्पष्ट है कि ४थी शती ई० पू० में कपास लगभग समस्त भारतवर्ष में पैदा होती थी।

कौटिल्य ने सूती वस्त्रों की सूची में काशी के सूती वस्त्रों का उल्लेख किया है बौद्ध साहित्य से भी यह प्रमाणित है कि बनारस प्राचीन काल में सूती वस्त्रों का महत्वपूर्ण केन्द्र था[२]। बौद्ध-साहित्य के अनुसार-बनारस के आस-पास कपास पर्याप्त मात्रा में पैदा होती थी। यहाँ की कुशल कत्तिने महीन सूत कातती थीं और बुनकर गफ सूना वस्त्र बुनते थे।

हिन्दू, बौद्ध और जैन साहित्यों से ज्ञात होता है कि धीरे-धीरे सूती वस्त्रों का प्रचलन बढ़ रहा था। हल्के और मुलायम होने के कारण सूती वस्त्र अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर रहे थे। दिव्यावदान में कपास के विशाल खेतों (कर्पासवाट) का उल्लेख है[३]। एक स्थान पर उपगुप्त के शरीर की कोमलता की उपमा कपास से दी है[४] कर्पासिकों और बुनकरों तंत्रवायक की अपनी अलग-श्रेणियां होती थीं[५]। विदेशों में भी भारतीय सूती वस्त्र लोकप्रिय हो रहे थे। यहाँ तक कि पूर्वी अफ्रिका, रोम, पश्चिमी और दक्षिण पूर्व एशिया के अनेक देशों में भारतीय सूती वस्त्र विलास की वस्तु समझे जाने लगे तथा उच्च समाज के दैनिक जीवन की महत्वपूण वस्तु बन गये।

गुप्त काल में झीने और पारदर्शी वस्त्रों की लोकप्रियता का आभास समकालीन चित्रों और मूर्तियों से मिलता है। कालिदास के साहित्य में अत्यंत महीन और हलके वस्त्रों का वर्णन है जो सांस लगने से उड़ जाते थे (निःश्वासहार्यांक, रघुवंश, १६,४३)। हर्षचरित में विवाह के अवसर पर दिए जाने वाले, सांप की केंचुली के समान महीन और स्पर्श से ही अनुभव किये जा सके; ऐसे कीमती वस्त्रों में बादर (सूती वस्त्र) का उल्लेख है[६]।

मध्य युगीन साहित्य में 'हंसतूल' (हंस के अलंकरणयुक्त सूती वस्त्र[७]), धौत कर्पासवास[८] तथा ऋतुओं के अनुसार मोटे और रंग-बिरगी सूती महीन वस्त्र पहनने के उल्लेख से सूती वस्त्रों की लोकप्रियता का आभास मिलता है।

१—अर्थशास्त्र, ग० शा०, १, पृ० १९५

२—महापरिनिब्बान सुत, ५।२६, भिक्षु धर्म रक्षित द्वारा अनुवादित, पृ० ८२-८४, तथा मज्झिम निकाय २।४।७

३—दिव्यावदान, २१; डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० ९३

४—दिव्यावदान, १४, १५

५—महावस्तु, भा० ३, पृ० ११३

६—हर्षचरित, चतुर्थ उच्छ्वास, राज्यश्री विवाह प्रसंग, डा० अग्रवाल, हर्षचरित : एकसांस्कृतिक अध्ययन, पृ० ७९

७—धनपाल रचित तिलकमञ्जरी (१० वीं श०), डा० मोतीचन्द्र, इण्डियन कास्ट्युमस एण्ड टेक्स्टाइल्स फ्रॉम दि एड्थ टू दि ट्वेल्फ्थ सेंचुरी, ज० इ० टे० हि०, भाग ५, पृ० १५

८—हेमचन्द्र रचित, द्वाश्रयकाव्य (११ वीं शती), १९।८

९—सोमेश्वर विरचित मानसौल्लास ६।३; शामा शास्त्री द्वारा सम्पादित, भाग १, पृ० २९३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत में विविध प्रकार की कपास पैदा की जाती थी। उदाहरणस्वरूप आचारांगसूत्र की टीका में 'कायाणि' का अर्थ नीले रंग की कपास से बना कपड़ा दिया है[१]। अमरकोश में कपास के पौधों के निम्नलिखित प्रकार बतलाये हैं —

'तुण्डिकेरी शमुद्रान्ता कपासी बदरेति च[२]'

तुंडिकेरी, समुद्रान्ता (समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों में होने वाली) और बदर, इन तीन के अतिरिक्त कपास का एक और प्रकार भी था जो जंगल में पैदा होता था। इसे अमरकोश में भारद्वाजी कहा है[३]।

अन्य देशों में कपास का विस्तार

विश्व के प्राचीनतम सभ्यता वाले देश भी कपास के पौधों से अपरिचित थे। इन देशों में भारतीय सूती वस्त्र प्रारम्भ में आश्चर्य परन्तु बाद में विलास की वस्तु बन गये। एक असीरियन क्यूनिफोर्म टेबलेट (६वीं शती ई० पू०) में कपास के पौधे का उल्लेख है। कहा है कि बेबीलोन में सेन्नशेरिब ने कपास के पौधे से वेबिलोनिया वासियों को परिचित करवाया। यहाँ इसे ऊन देने वाला पौधा कहा है[४]। ५वीं शती ई० पूर्व में यूनानी लेखक हेरोडोटस ने भी भारत के ऊन देने वाले पौधे का उल्लेख किया है। इसी प्रकार सिकन्दर के समय तक के अन्य यूनानी लेखकों ने भी कपास को ऊन देने वाला पौधा कह कर आश्चर्य व्यक्त किया है[५]।

सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् (ईसा से तीसरी शताब्दी पूर्व) भारतीय सूती वस्त्रों से यूनानी परिचित हो चुके थे। ३५० ई० पूर्व में थियोफ्रेस्टस कहता है कि कपास भारत और अरब दोनों देशों में पैदा होती है[६]।

पहली शती के समुद्री यात्रा विवरण 'पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी' (ई० सन् ६५) में भारत के विभिन्न बन्दरगाहों से बड़ी मात्रा में सूती वस्त्रों को विदेशों में निर्यात किये जाने का उल्लेख है। एरियन ने नरकस, मेगस्थनीज, स्ट्राबो तथा एरेटोस्थनीज इत्यादि यूनानी यात्रियों के आधार पर लिखी हुई अपनी पुस्तक 'इन्डिका' (१५० ई०) में कहा है कि भारत में पैदा होने वाली कपास अन्य देशों की अपेक्षा अधिक सफेद और चमकीली होती है[७]। इससे सहज ही यह संकेत मिलता है कि ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में भारत से व्यापारिक सम्बन्ध होने के कारण अन्य देश यहाँ से कपास का बीज ले जाकर खेती करने लगे, परन्तु

१—डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० १४७

२—अमरकोश, २।४।११६

३—वही, २।४।११७

४—इर्विन, जान, दि आर्ट आफ इंडिया एण्ड पाकिस्तान पृ० २०१, फु० नो० ४

५—गौड, रामदास (अनुवादक), हाथ की कताई-बुनाई, पृ० २५

६—वाट, कार्माशियल प्रोडक्ट, पृ० ५७२

७—वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रारम्भ में इन देशों में पैदा होनेवाली कपास बहुत निम्न कोटि की होती थी। इसके अति-रिक्त व्यापारिक दृष्टि से या धर्म प्रचार हेतु जहाँ-जहाँ भारतवासी जाकर बसे वहाँ-वहाँ कपास का बीज (बिनौला) ले गये और सूती वस्त्रों को प्रचिलित किया। उदाहरणस्वरूप मध्य एशिया की खुदाई में बड़ी मात्रा में तीसरी से आठवीं शती तक के सूती वस्त्रों के नमूने मिले हैं। इनमें से कुछ नमूने भारतीय उत्पत्ति के माने जाते हैं[1]। उसी प्रकार दो भारतीय यात्रियों द्वारा लगभग ८वीं या ९वीं शती में जापान में कपास ले जायी गयी, इसके प्रमाण वहाँ के सरकारी विवरणों में मिलते हैं[2]।

अरब में भी व्यापारिक आदान-प्रदान के द्वारा ही ई० सन् से पूर्व ही कपास का पौधा पहुँच चुका था[3]। चीन में छठी शती में कपास का पौधा फूल के लिए बगीचों में लगाया जाता था तथा १३वीं शती के बाद कपास की पैदावार कपड़े बनाने के लिए प्रारम्भ हुई[4]।

येटीस (टेक्स्ट एंटिक, १८४३, ३३४, ५४) के मतानुसार मिस्र में कपास की खेती सर्व-प्रथम १३वीं या १४वीं शती से प्रारम्भ हुई। अपने इस मत को सबल करने के लिए अरब हकीम अब्दुललतीफ का उल्लेख किया है जो १२वीं शती में मिस्र गया। उसने वहां पैदा होने वाले पौधों की जो सूची दी है उसमें कपास का नाम नहीं है[5]। उनके मतानुसार मिस्र के पुराने चित्रों में भी अतसी के रेशों से सूत तैयार करके वस्त्र बुनने के दृश्य हैं परन्तु कपास का संकेत नहीं मिलता।

१३५० में अंग्रेज यात्री सर जॉन मंडेविल ने अपने भारत-यात्रा विवरण में यहाँ पैदा होने वाले विचित्र पौधे (कपास) का उल्लेख किया है[6]। १७ वीं शती में जब सर्वप्रथम ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा इंग्लैंड में कपास ले जायी गयी तो वहाँ उसे वृक्ष पर पैदा होने वाली ऊन कहकर आश्चर्य व्यक्त किया गया। सर मार्टिंग नोएल भी इसे वृक्ष पर पैदा होने वाली ऊन कहते हैं[7]।

ऊपर हम देख चुके हैं कि किस प्रकार धीरे-धीरे विभिन्न देशों में कपास से लोग परिचित हुए तथा स्वयं कपास और सूती वस्त्रों का उत्पादन करने लगे। फिर भी १७वीं से १९वीं शती तक के व्यापारिक विवरणों से प्रमाणित हैं कि भारतीय सूती वस्त्रों की लोकप्रियता इन देशों में बहुत बाद तक बनी रही। फार्स्टर ने अपनी पुस्तक 'इंग्लिश फेक्टरीज़' में १५० प्रकार के सूती वस्त्रों की सूची दी है जो यहाँ से विदेशों को निर्यात किये जाते थे।

१—स्टाइन, ओरेल, एन्शियेंट खोतान, भाग १, प्लेट ७५ तथा ७६
२—हाथ की कताई-बुनाई, पृ० ३२
३—वाट, का० प्रो० आफ इंडिया, पृ० ५७२
४—वही
५—वही
६—इन सायक्लोपीडिया आफ टेक्सटाइल्स पृ० ७० तथा हाथ की कताई-बुनाई, पृ० २९
७—विरेल, टेक्सटाइल आर्टस, पृ० २७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मलमल

भारत में बनने वाले कीमती सूती वस्त्रों मे मलमल प्रमुख है। इसकी बारीकी, कोमलता और चमक प्राचीन काल से संसार को आश्चर्य-चकित करती रही है। इन्हीं गुणों के कारण इसे वायु, आकाश[1], ओस, धूँआ, चांदनी, सर्प की कैंचुली तथा बहते हुए पानी इत्यादि के समान कहा गया है।

मलमल शब्द की व्युत्पत्ति कैसे हुई तथा महीन सूती वस्त्रों के लिए यह नाम कब से प्रयुक्त होने लगा यह कहना कठिन है। यहाँ यह कहना प्रसंगोचित होगा कि संस्कृत भाष्यों में 'मलमल्लक' शब्द कफन के कपड़ों के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है[2]। सस्कृत ग्रन्थों में 'मल्लक' शब्द एक प्रकार के कोपीन के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है[3] तथा 'मलमला' शब्द चमक (फ्लेशिंग के अर्थ में[4]।

सुल्तान काल के अनेक ग्रन्थों में महीन वस्त्रों के अर्थ में 'मलमल' तथा उसके विभिन्न प्रकारों के लिए अनेक नाम मिलने लगते हैं। मलमल के लिए अंग्रेजी में 'मस्लिन' शब्द प्रयुक्त होता है। बर्डवुड के अनुसार यह नाम मोसुल नामक शहर (ईराक) के नाम पर पड़ा[5]। इटैलियन यात्री मार्कोपोलो (१३ वीं शती) ने मोसुल राज्य के बारे में लिखा है कि यहाँ सभी प्रकार के सोने और चाँदी के काम के कपड़े जो कि मोसोलिनस कहलाते है बनते हैं[6]। यद्यपि यहाँ 'मोसोलिन' शब्द महीन सूती कपड़े के अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ, परन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि मोसुल में बड़ी मात्रा में मजबूत सूती कपड़ा भी बनता था जो स्थान के नाम पर 'मोसोलिन' कहलाता था। अरबी भाषा में 'मोसिल्ली' शब्द महीन कपड़े मलमल) के अर्थ में प्रयुक्त होता था[7]।

प्राचीन बौद्ध-साहित्य में 'विरली' शब्द मलमल जैसे महीन वस्त्र के अर्थ मे मिलता है। संस्कृत साहित्य में 'विरलिका' भी इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है[8]। डा० मोतीचन्द

१—माघ ने आकाश के समान झीने वस्त्रों का उल्लेख किया है।

२—इस जानकारी के लिए मैं आ० राय कृष्णदास जी की आभारी हूँ।

३—विलिअम्स्, मोनिअर, ए संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी, न्यू एडीशन, आक्सफोर्ड, १८९९, पृ० ७९२

४—वही

५—बर्डवुड, जार्ज सी० एम०, दि इंडस्ट्रियल आर्टस आफ इंडिया, १८८०, पृ० २३९

६—वही

७—वही

८—ए संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी, पृ० ९८२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वृहत् कल्पसूत्र भाष्य में वस्त्रों की सूची में चादरों के एक प्रकार 'विरलिका' का अर्थ दोसूती कहते हैं जो उचित प्रतीत नहीं होता। अपने मत के पक्ष में उन्होंने कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं दिया है। निःस्सन्देह यहाँ 'विरलिका' महीन उपरना या चादर के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

भारत के अधिकतर भागों की गर्म और आर्द्र जलवायु के कारण महीन और हल्के वस्त्र सदा से लोकप्रिय रहे हैं। जलवायु सम्बन्धी आवश्यकता तथा कलाकौशल की दृष्टि से पारदर्शी और हलका होना वस्त्रों का महत्वपूर्ण गुण माना गया है। राज्यश्री के विवाहोपलक्ष में दिये गये वस्त्रों के गुणों का वर्णन करते हुए बाण कहते हैं कि वे साँप की केंचुली के समान महीन, केले के मध्य भाग की तरह कोमल, फूंक से उड़ जायें इतने हल्के तथा केवल स्पर्श से ही जाने जा सकें इतने पारदर्शी थे[२]। सोमेश्वर ने भी मानसोल्लास में कपड़ों का एक गुण महीन (विरलानि) होना बतलाया है[३]। प्राचीन तमिल-साहित्य में भी सर्प को केंचुली तथा दूध की भाप के समान महीन पारदर्शी वस्त्रों का काव्यात्मक वर्णन है[४]। गुप्त युग की मूर्तियों और अजंता के चित्रों में शरीर से चिपके हुए पारदर्शी वस्त्र मलमल की लोकप्रियता प्रमाणित करते हैं। इस युग के साहित्य में भी महीन, पारदर्शी और हल्के वस्त्रों का उल्लेख अनेक स्थानों पर हुआ है।

आचारांग में 'सहिणाणि' नामक महीन सूती कपड़े का उल्लेख है, जिसे निशीथचूर्णी में सूक्ष्म कहा गया है[५]। जैन लेखक हेमचन्द्र ने महीन वस्त्रों की प्रशंसा करते हुए उन्हें चन्द्रमा की किरणों से बुना हुआ बतलाया है[६]।

लोगों की आवश्यकता. अनुकूल जलवायु सम्बन्धी परिस्थितियों तथा वंशानुगत कला-कौशल और कारीगरों की अटूट धैर्य साधना के परिणामस्वरूप बनने वाली भारतीय मलमल प्रारम्भ में विश्व को आश्चर्यचकित कर, ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में ही सम्पूर्ण सभ्य संसार में लोकप्रियता प्राप्त कर चुकी थी। प्राचीन रोम में भारतीय मलमल विलास की वस्तु समझी जाती थी, जिसके लिए प्रति वर्ष बहुत बड़ी मात्रा में रोमन सिक्के भारत आते थे[७]। भारत की महीनतम मलमल के प्रशंसक रोमनवासियों ने इसे 'वेंटस टेक्स्टाइलिस' तथा 'नेबुला' जैसे अनेक काव्यात्मक नाम दे रखे थे[८]। यूनानी लेखक प्लीनी के अनुसार भारतीय

१—डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० १६८

२—हर्षचरित, चतुर्थ उच्छ्वास तथा देखिये, डा० अग्रवाल, हर्षचरितः एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ० ७९

३—मानसोल्लास, ६।३।१०७५, पृ० २९६

४—बाजपेयी, कृष्णदत्त, भारतीय व्यापार का इतिहास, मथुरा, १९५१ पृ० ९२

५—डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू० पृ० २४९

६—डा० मोतीचन्द्र, ज० ह० टे० हि० भाग ५, पृ० १६

७—बाजपेयी, कृष्णदत्त, भारतीय व्यापार का इतिहास, पृ० ९२

८—शाफ, दि पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी, पृ० ४१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माल (विविध प्रकार के सुगन्धित पदार्थ, रत्न तथा महीन मलमल इत्यादि भारत से जाने वाली विलास की वस्तुयें) रोम में आकर सौ गुने मूल्य पर बिकता है और ऐसा कोई वर्ष नहीं जाता जिसमें भारतीय व्यापारी रोम से कम से कम साढ़े पाँच करोड़ सैस्तर (लगभग ६ लाख अशर्फियां) न खींच ले जाते हों[१]। पैत्रोनि नामक एक अन्य लेखक ने रोमन स्त्रियों में अत्यन्त पारदर्शी भारतीय मलमल की लोकप्रियता की आलोचना करते हुए लिखा है कि, रोम की वनितायें बुनी हुई हवा के जाले (वेंट्स टेक्सटाइलिस अर्थात् मलमल) पहन कर अपना सौंदर्य झलकाती हैं[२]। पेरिप्लस के अनुसार गुजरात से निर्यात किये जाने वाले सूती वस्त्रों में सर्वश्रेष्ठ मलमल 'मोनाचे' कहलाती थी, जो अन्य प्रकार के वस्त्रों के साथ पूर्वी अफ्रिका के बन्दरगाहों को निर्यात की जाती थी[३]। पेरिप्लस ने दक्षिण में बनने वाली मलमलों का भी उल्लेख किया है[४], परन्तु विदेशों में सर्वाधिक लोकप्रिय मलमल 'गंजेटिक' थी जिसकी पहचान विद्वान बंगाल में ढाका के आसपास बुनी जानेवाली महीन मलमल से करते हैं[५]। यूनानी लेखक एरियन तथा लूशियन ने भी भारतीय सूती वस्त्रों की सफेदी, चमक, हल्केपन तथा कोमलता की प्रसंशा की है[६]। कुछ प्रमुख विद्वानों का मत है कि मिस्र की मम्मियों पर लपेटा गया महीन वस्त्र बंगाल की प्रसिद्ध मलमल ही है।

बाद के युगों में आनेवाले विदेशी यात्रियों ने भी भारतीय मलमल की प्रसंशा की है। इनमें बर्नियर तथा टेवेर्नियर प्रमुख हैं। टेवेर्नियर ने मालवा और बंगाल के महीन सूती वस्त्रों के बारे में लिखा है कि वे इतने महीन होते हैं कि स्पर्श से ही जाने जा सकते हैं। १७ वीं शती में आये लिनशोटेन नामक यात्री ने दक्षिण के बनने वाले कीमती महीन सूती वस्त्रों की प्रसंशा की है[७]। १८९७वें में माउट स्टुअर्ट एलफिस्टन लिखता है कि भारत की समस्त कारीगरियों में सूती वस्त्र सबसे अनोखे हैं, जिनकी बुनावट और बारीकी की बराबरी अन्य कोई देश नहीं कर सकता[८]। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के विवरणों से भी ज्ञात है कि भारत से निर्यात किये जाने वाले वस्त्रों में महीन सूती वस्त्रों की मांग सबसे अधिक रहती थी[९]।

१—बाजपेयी, वही, पृ० ९२

२—वही

३—साफ, दि पेरिप्लस आफ दि ऐरिथ्रियन सी, पृ० ७९-७३, १७९-१८०

४—वही पृ० ४१ तथा ४६

५—वही पृ० ४७

६—वर्मिगंटन, कामर्स बिटविन दि रोमन एम्पायर एण्ड इण्डिया, पृ० २१२

७—हाथ की कताई-बुनाई पृ० ३२

८—वही

९—वही पृ० ५६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय सूती वस्त्रों की श्रेष्ठता के कारण

भारत के अनेक प्रदेशों में श्रेष्ठ प्रकार की कपास पर्याप्त मात्रा में पैदा होती है जो यहां की सूती वस्त्र उद्योग के विकास का महत्वपूर्ण कारण है। इसके अतिरिक्त सूती वस्त्र यहां की जलवायु के सर्वाधिक अनुकूल रहे हैं। इस कारण इनकी मांग निरन्तर हर ऋतु में बनी रही और कारीगर सदा सूती वस्त्रों के निर्माण में व्यस्त रहे। इस प्रकार शताब्दियों तक वंशानुगत रूप से निरन्तर कार्यशील रहने वाले कारीगरों का कार्य कुशल होना स्वाभाविक ही है।

सूत की कताई का काम भी प्राचीन काल से घर-घर में होता आ रहा है। विशेष रूप से स्त्रियां इस काम को करती आ रही हैं। कभी-कभी उच्च वर्ग की स्त्रियां भी घर बैठे अतिरिक्त आदमी के हेतु कताई का काम करती थीं। इस प्रकार बुनकरों को कते हुए सूत की कभी कमी नहीं रही। इतना ही नहीं, महीनतम मलमल के विकास में कताई करने वाली स्त्रियों का धैर्यवान स्वभाव, उत्साह और लगन विशेष रूप से सहायक सिद्ध हुआ।

कारीगरों को उचित राजकीय संरक्षण प्राप्त होते रहना भी कीमती सूती वस्त्र उद्योग के विकास का एक प्रमुख कारण था। भारतीय शासकों ने अपने व्यस्त राजनैतिक जीवन के होते हुए भी कलापूर्ण उद्योग धन्धों के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया। एक ओर भारतीय शासक दरबारी वैभव के प्रतीक भारी ज़रीके तथा रत्न जड़ित वस्त्रों के प्रेमी रहे, तो दूसरी ओर सुरुचिपूर्ण कीमती सूती वस्त्रों को भी उनके निजी जीवन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। राज्य में सदा कारीगरों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था तथा समय-समय पर उपहारादि देकर सम्मानित किया जाता था। दैनिक पारिश्रमिक के अतिरिक्त उनके परिवार के भरण पोषण के लिये पर्याप्त मात्रा में जमीन आदि देने की उचित व्यवस्था भी राज्य की ओर से की जाती थी। इस प्रकार अपने दैनिक जीवन की सभी चिन्ताओं से मुक्त होकर कारीगर पूरी लगन से कला के विकास में लगा रहता था।

शौकीन तबियत वाले मुसलमान शासकों ने भी भारत के परम्परागत वस्त्र उद्योग को बराबर प्रोत्साहन दिया और विदेशी कारीगरों की सहायता से अनेक कलाओं का नये ढ़ंग से विकास किया। छोटे-छोटे नवाब और अमीर-उमरावों में भी कुशल और योग्य कारीगरों को संरक्षण देने की होड़ लगी रहती थी। इस प्रकार उपर्युक्त सभी अनुकूल परिस्थितियों तथा कारीगरों की शताब्दियों तक अटूट साधना के परिणाम स्वरूप ही मलमल और अन्य प्रकार के कीमती सूती वस्त्रों का इतना निखरा हुआ रूप आज अनेक संग्रहालयों में देखने को मिलता है।

प्राचीन काल से मुगल काल तक विकसित महीन सूती वस्त्रों के प्रमुख केन्द्र

कौटिल्य ने राजकोष में संग्रहीत सूती वस्त्रों को सूची दी है[1] जिससे मौर्यकाल में सुविकसित सूती वस्त्र उद्योग के प्रसिद्ध केन्द्रों पर प्रकाश पड़ता है। इनमें से कई केन्द्र मुगल

१—कौटिल्य अर्थशास्त्र (सं० गणपति शास्त्री), पृ० १९५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काल तक सूती वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध रहे। कुछ केन्द्र मध्यकाल में और कुछ मुसलमान काल में आकर विकसित हुए। इस प्रकार ४थी शती ई० पू० से मुगल युग में आते-आते महीन सूती वस्त्रों के अनेक केन्द्र विकसित हुए जिनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

काशी

काशी अपने कीमती सूती वस्त्रों के लिए ४थी शती ई० पू० में ही प्रसिद्ध हो चुका था। यहाँ के बने कपड़ों को प्राचीन साहित्य में काशिक[1], वाराणसेय्यक[2], काशीकुत्तम[3], काशिक-वस्त्र[4], काशी[5], तथा काशिकांसु[6] कहा गया है। उल्लेखों से स्पष्ट है कि बनारस जो अब रेशमी और जरी के वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध है, आरम्भ में सूती वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध था। जातक कथाओं से ज्ञात होता है कि बनारस के आस पास बड़ी मात्रा में कपास पैदा होती थी तथा यहां की कुशल कत्तिने महीन सूत कातती थीं[7]। महापरिनिब्बान सुत्त में उल्लेख है कि भगवान बुद्ध का शव बनारस के बुने वस्त्र में लपेटा गया था[8]। दिव्यावदान[9] तथा भैषज्यगुरु सुत्त में भी काशी के बने महीन सूती कपड़ों का उल्लेख हुआ है[10]। ललितविस्तर में काशी' के बनाये सुन्दर वस्त्रों की चर्चा है[11]। मध्ययुगीन शब्दकोशों में उल्लिखित 'काशिय'[12] भी सम्भवतः काशी के महीन सूती वस्त्रों के लिए प्रयुक्त हुआ है।

मुगल काल में आकर यद्यपि बनारस रेशमी और जरी के वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध हो चुका था, परन्तु उच्च प्रकार के महीन सूती कपड़े भी यहां बुने जाते रहे। मुगल कालीन ब्रज भाषा के ग्रन्थ 'चकत्तावंश प्रकाश' (संवत् १८०८-१८२५) में लेखक इलाहाबाद सूबे का वर्णन करते हुए लिखता है-'कपड़ा भूना महरकुली बनारस जलालाबाद मा चौखा बनता है'। 'भूना' और 'महरकुली' दोनों मध्ययुग में लोकप्रिय मलमलों के नाम हैं, जिनके बारे में आगे विस्तार से बताया जायेगा। भारत कला भवन में संग्रहीत बनारस के बने महीन सूती वस्त्र

१—ग० शा० १, पृ० १६५
२—महापरिनिब्बान सुत्त ३।२६
३—जातक, ६, पृ० ४७, ६।१५१, १।३५५
४—दिव्यावदान, पृ० ३१६
५—वही, पृ० ३६८
६—वही, पृ० ३१६
७—डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० ६६
८—महापरिनिब्बान सुत्त, ३।२६
९—दिव्यावदान, पृ० ३६१
१०—गिलगिट टेक्स्ट्स, भाग १, पृ० १२५-१२६, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० ६७
११—ललित विस्तर (सं० डी० पी० एल० वैद्य, दरभंगा, १९५८), पृ० १५५ तथा पृ० १६५
१२—देशीनाममाला, २।५६, पृ० ७६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा कीमती जामदानी के चौकोरा व दुपट्टे प्रमाणित करते हैं कि यहाँ मलमल बुनने की परम्परा ४ थीं शती ई० पू० से २० वीं शती तक बनी रही।

बंगाल

बंगाल भी सूती वस्त्र उद्योग के प्राचीनतम केन्द्रों में से है। अर्थशास्त्र में यहां के सूती कपड़ों को 'वाङ्गकम्' कहा है। 'पेरिप्लस ऑफ दि एरिथ्रियन सी' में उल्लिखित 'गंजेटिक' नामक महीन मलमल की पहचान भी कुछ विद्वान बंगाल की बुनी हुई महीन मलमल से करते हैं[1]।

अरबी यात्री सुलेमान (९ वीं शती) भारत यात्रा विवरण में रोहमी राज्य के विषय में लिखता है-'इसके राज्य में एक ऐसा कपड़ा होता है जैसा किसी अन्य स्थान में होता ही नहीं। वह कपड़ा छोटी अँगूठी के घेरे में से गुजारा जा सकता है। वह रुई से ही बनाया जाता है। मैंने अपनी आंखों से कुछ कपड़ों को देखा है[2]। विद्वानों का विश्वास है कि यह विवरण पालराज्य (बंगाल) में बुनी जाने वाली महीन मलमल का ही है। मसूदी (९१६ ई०) ने भी रहन (बंगाल) में बनने वाली महीन मलमल की प्रशंसा की है[3]। जिस प्रकार प्राचीन काल में 'वांगक' (अर्थशास्त्र) बंगाल की बनी मलमल के अर्थों में प्रयुक्त होता था, उसी प्रकार बाद से युगों में बंगाल शब्द प्रयुक्त होने लगा[4]।

मुसलमान काल में ढाका कीमती महीन मलमल के लिए सम्पूर्ण संसार में प्रसिद्ध हो चुका था। विदेशी इसकी बारीकी से आश्चर्य-चकित थे। १६ वीं शती में पैराडं नामक यात्री अपने यात्रा विवरण में लिखता है कि, बंगाल के कुछ कपड़े इतने महीन होते हैं कि इन्हें पहनने पर यह नहीं प्रतीत होता कि मनुष्य ने कुछ पहना हुआ है[5]। योरोपीय विवरणों से ज्ञात होता है कि १७ वीं शती में बंगाल के महीन कपड़े दक्षिण पूर्व एशिया के देशों तथा अन्य देशों को बड़ी मात्रा में निर्यात किये जाते थे[6]। १७ वीं से १९ वीं शतो तक आये राल्फ फिच तथा टेवेर्नियर आदि योरोपीय यात्रियों के विवरणों से भी ज्ञात है कि अरब, ईरान, मिश्र, पेगू, मलक्का, सुमात्रा और मध्य सागर के कई देशों में भारतीय मलमल का व्यापार बहुत बढ़ा हुआ था। १८ वीं शती के अन्त में मिस्टर वाल्ट्स ने लिखा है कि नवाब अलीवर्दी खाँ के समय में एक

१—शाफ, पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी, पृ० ४७

२—सुलेमान सौदागर, (सं० राय बहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, बनारस १९२१) पृ० ५४, टेवेर्नियर ने भी अंगूठी में से निकल जाने वाले मलमल के थानों का उल्लेख किया है।

३—डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि० ५, पृ० २८

४—वही, ६ पृ० २३

५—पैराड्‌स ट्रेवेल्स, भाग २, पृ० २४७

६—लेटर्स रिसीव्ड बाय ईस्ट इंडिया कम्पनी फ्राम इट्स सर्वेन्ट्स इन दि ईस्ट (डब्लू० फास्टर द्वारा संम्पादित), लन्दन १८९६, भाग १, पृ० ६०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुशल जुलाहा एक व्यापारी को एक बार में मलमल के ८०० थान तक बेच देता था[१]। १८४४ में मिस्टर डे ढाका के कलेक्टर थे, उनके एक सर्वेक्षण के अनुसार प्रतिवर्ष ढाका से मलमल का व्यापार एक करोड़ रुपये का था जिसमें से ३०-४० लाख का माल योरोप भेजने के लिए खरीदा जाता था। ढाका मलमल के प्रकार तथा बुनने के तरीके इत्यादि का विस्तृत विवरण आगे इसी अध्याय में दिया जा रहा है।

बिहार

मध्ययुग के साहित्य से ज्ञात है कि इस समय बिहार में मलमल के कई केन्द्र विकसित हो चुके थे। अमीर खुसरो (१४ वीं शती) ने 'झबर्तली' तथा 'बिहारी' नामक मलमलों का काव्यात्मक वर्णन किया है[२]। डा० मोतीचन्द्र के अनुसार 'झंबर्तली' बिहार के झुमरीतलइया नामक स्थान में बुनी जाती थी[३]। 'झबर्तली' मलमल का उल्लेख समकालीन अन्य ग्रन्थों तथा बाद के यूरोपीय व्यापार सम्बन्धी विवरणों में भी मिलता है। पटना के पास जहानाबाद में अच्छी मलमल बुनी जाती थी[४]। यहां ईस्ट इंडिया कम्पनी की फैक्टरी थी[५]।

सम्भवतः बिहार में महीन वस्त्र बुनने की परम्परा मौर्य काल से चली आ रही थी। अर्थशास्त्र में मौर्यों के राजकीय कारखानों में कुशल सूत कातने वालों की नियुक्ति का तथा सुविकसित वस्त्र उद्योग का उल्लेख है[६]। जैन साहित्य से भी ज्ञात है कि पटना के दक्षिण पश्चिम में मलय नामक स्थान महीन मलमल के लिए प्रसिद्ध था[७]।

कलिंग तथा दक्षिण के अन्य केन्द्र

अर्थशास्त्र में दक्षिण में सूती वस्त्रों के केन्द्र के रूप में मधुरा (आधुनिक मदुरा जो पाण्ड्यों की राजधानी थी), अपरान्तक, (कोंकण), कलिंग तथा महिषदेश (महिषमती) का उल्लेख है। महाभारत में राजसूय यज्ञ के अवसर पर दक्षिण के चोल और पाण्ड्य शासकों द्वारा कीमती उपहारों के साथ 'सूक्ष्मवस्त्रकम्' भेंट करने का उल्लेख[८] यह प्रमाणित करता है कि दक्षिण में भी अति प्राचीन काल में मलमल बुनने के कई केन्द्र विकसित हो चुके थे, जो

१—हाथ की कताई-बुनाई, पृ० ५१

२—वहीद मिर्जा, लाइफ एण्ड वर्क्स आफ अमीर खुसरो, पृ० ६६

३—डा० मोतीचन्द्र, जर्नल आफ इंडियन टेक्सटाइल हिस्टरी ६, पृ० ८

४—मुखर्जी, टी० एन०, आर्ट मनुफैक्चर्स आफ इंडिया, पृ० ३२० तथा बुर्डवुड, इंडस्ट्रियल आर्ट आफ इंडिया, पृ० २४६

५—मनुची, स्टोरिया डो मंगोर, भाग २, पृ० ८३

६—अर्थशास्त्र, २२।४०, ग० शा०, पृ० २७६

७—जैन, लाइफ इन एनशेंट इंडिया, पृ० ३१०

८—महाभारत, २।७६।११४, (सं० टी० आर० कृष्णाचार्य), बम्बई १६०६, भाग १, पृ० ११७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहुत बाद तक रहे। त्रिचनापल्ली और तंजौर की बनी मलमल रोम में 'आर्गरितिक' नाम से प्रसिद्ध थी[१]।

मानसोल्लास में भी दक्षिण के प्रमुख केन्द्रों में नागपट्टण (नागापट्टिम, आन्ध्र), पाण्ड्य देश (कोरोमंडल तट), तोंडी (कांचीपुरम् के आस-पास का प्रदेश) तथा कलिंग का उल्लेख किया गया है। मैथिल ग्रन्थ 'वर्ण रत्नाकर' (१४ वीं शती, ज्योतिश्वर ठाकुर रचित) में एक स्थान पर एक सखी को 'कांचो वरली' की चोली पहले बतलाया है[३]।

तमिल साहित्य के अनुसार दक्षिण के नाग बुनकर बुनाई कला में पारंगत थे। उनकी बुनी हुई कीमती मलमल सम्राटों और देवताओं को भेंट करने की वस्तु थी[४]। २० वीं शती के आरम्भ तक नादेर तथा नारायणपेठ आदि स्थानों पर तहखानों में या बन्द कोठरियों के फर्श को पानी से अच्छी तरह तर करके ढाका के समान महीन सूत काता जाता था और महीन मलमल बुनी जाती थी। अरनी तथा कोरोमण्डल तट के प्रदेशों में कुछ दशक पूर्व तक महीन सूती वस्त्र बुने जाते रहे हैं। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, १७ वीं शती के योपीय यात्रियों ने भी दक्षिण भारतीय मलमल को प्रशंसा की है। विवरणों से यह भी ज्ञात होता है कि विदेशों में इनकी पर्याप्त खपत थी। टामस हिकोक के अनुसार १६ वीं शती में भी उड़ीसा से प्रतिवर्ष कई जहाजों में भरकर महीन सूती वस्त्र विदेशों को निर्यात किये जाते थे[५]।

देवगिरि (दौलताबाद)

मध्ययुग में विकसित मलमल के केन्द्रों में देवगिरि (आधुनिक दौलताबाद) प्रमुख है। स्थान के नाम पर ही यहां की मलमल 'देवगिरि' या 'देवगिर' कहलाने लगी। अमीर खुसरो (१४ वीं शती) ने काव्यात्मक भाषा में देवगिरि के मलमल की पारदर्शिता और हलकेपन की प्रशंसा की है। एक उल्लेख के अनुसार देवगिरि के शासक लद्दरदेव ने कुतुबुद्दीन मुबारक शाह (१३१६-२०) को कीमती मलमल भेंट की जो इतनी महीन थी कि १०० गज का थान सुई के छेद में से निकल सकता था, परन्तु महीन होने के साथ ही वह इतनी गफ़ बुनी गयी थी कि तेल, पानी और सुई तक उसमें प्रविष्ट नहीं हो सकती थी[६]। अन्य स्थान पर खुसरो ने देवगिरि की मलमल को चांदनी और पानी की बूदों से भी महीन तथा पारदर्शी बतलाते

१—पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी, पृ० ४६

२—मानसोल्लास, ३।६।१०६३-१०६६, पृ० २६५

३—वर्णरत्नाकर, सुनीति कुमार चटर्जी तथा वबुआ मिश्रा द्वारा संपादित, पृ० ५

४—कनकल्स भै, दि तमिल्स एट्टीन हड्रेड इयर्स एगो, पृ० ५४, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० ६४

५—दासगुप्ता, जी० एन०, बेंगाल इन दि सिक्स्टीन्थ सेंचुरी, पृ० ७०२

६—वहीद मिर्जा, लाइफ एण्ड वर्क्स आफ अमीर खुसरो, पृ० १२३

डा० मोतीचन्द्र, ज० हि० टे० हि०, ६, पृ०८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुए कहा है कि इसको पहनने से शरीर पर कपड़े का आभास नहीं होता, ऐसा प्रतीत होता है मानों शरीर स्वच्छ जल में भींगा हुआ हो[१]।

सुल्तान अलाउद्दीन की आज्ञा से जिन वस्तुओं के मूल्य नियन्त्रित किये गये उनकी सूची में 'देवगिरि' भी है[२]। इब्नबतूता के अनुसार दौलताबाद से आने वाले कपड़ों की कीमत बहुत अधिक होने के कारण अलाउद्दीन ने उसे कर मुक्त कर दिया[३]। १३५० में ईसामी लिखता है कि रामदेव को पराजित करने के पश्चात् तुर्की सैनिकों ने देवगिरि की कीमती मलमल को लूटा[४]।

अवध तथा उत्तर भारत के अन्य केन्द्र

अवध के नवाबों के समय उत्तर प्रदेश में महीन मलमल और जामदानी के अनेक केन्द्र विकसित हुए, जिसमें लखनऊ, जायस (जिला रायबरेली), टाँडा (जिला फैजाबाद) इत्यादि महत्त्वपूर्ण हैं[५]। अवध नवाबों के पतन के साथ ही इन स्थानों में वस्त्र उद्योग भी अवनति करने लगा।

मि० विलियन होय जो १८७९-८० में लखनऊ के सीटी मजिस्ट्रेट थे, अपने एक मोनोग्राफ में लिखते हैं 'कुछ वर्ष पूर्व तक लखनऊ में हथकर्घा उद्योग बहुत विकसित अवस्था में था परन्तु धीरे-धीरे अंग्रेजी कपड़ों के प्रसार ने देशी माल को बाजार से निकाल फेंका। इसके परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में जुलाहे अन्य स्थानों को जा बसे तथा कुछ ने अन्य उद्योग अपना लिया''[६]। इस प्रकार यद्यपि १९ वीं शती के अन्त तक अवध में वस्त्र उद्योग पूर्ण पतनावस्था में पहुँच चुका था, फिर भी थोड़ी बहुत मात्रा में स्थानीय मांग की पूर्ति के लिए मलमल और जामदानी २० वीं शती के पूर्वार्ध तक बुनी जाती रहीं।

लखनऊ में मलमल महमूद नगर में मुख्य रूप से बुनी जाती थी। यहाँ बुने मलमल के प्रकारों में शरबती, तजेब, अद्धो तथा तरंदाम प्रसिद्ध है[७]। इनके अतिरिक्त जामदानी, डोरिया इत्यादि भी लखनऊ में बुने जाते थे। सादा मलमल प्रायः चिकन और अन्य प्रकार की सुई-

---

१—वहीद मिर्जा, लाइफ एण्ड वर्क्स ग्राफ अमीर खुसरो, पृ० १३०-१३१; नियाउद्दीन बरानी, तवारीख फिरोजशाही, कलकत्ता १८६२ पृ० ३०९-३१२

२—डा० मोतीचन्द्र, ज० ह० टे० हि० ६, पृ० १०

३—वही

४—वही

५—मुखर्जी, टी० एन०, ग्रार्ट मैनुफैक्चर्स, पृ० ३२९

६—होय, विलियम, ए मोनोग्राफ ग्राफ ट्रेड एण्ड मेनुफेक्चर्स इन नार्दन इंडिया, लखनऊ १८८०, पृ० १२३

७—वही तथा मुखर्जी, टी० एन०, ग्रार्ट मेनुफैक्चर्स, पृ० ३२१ तथा डिस्ट्रीक्ट गजेटियर, यू० पी०, लखनऊ, पृ० ३६-३९,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कारी में प्रयुक्त होती थी। यहाँ के जुलाहे छेदी ठाकुर एण्ड कम्पनी जैसी व्यापारिक संस्थाओं से सूत खरीदा करते थे।

श्री मुखर्जी के अनुसार रायबरेली जिले में स्थित जायस में ढाका के समान ही सुन्दर महीन मलमल अवध के नवाबों के समय बुनी जाती थी[१]। उस समय यह स्थान तंजेब के लिए प्रसिद्ध था[२]।

टांडा (फैजाबाद) में भी श्रेष्ठ प्रकार की मलमल बुनी जाती थी। जिसकी खपत अवध दरबार में बड़ी मात्रा होती थी। बर्डवुड से ज्ञात होता है कि १९ वीं शती के अन्त तक यहाँ की मलमल का स्तर भी गिर चुका था[३]। यहाँ जामदानियां भी बुनी जाती थी जिसको आगे विस्तार से दिया जा रहा है।

हरदोई जिले में महमूंदी मलमल बुनी जाती थी[४]। सिकन्दराबाद (बुलन्दशहर जिला) में भी पगड़ी और रूमाल इत्यादि के लिए अच्छी मलमलें बुनी जाती थीं[५]। वाट ने मलमल के केन्द्र के रूप में मऊ (आजमगढ़) का भी उल्लेख किया है[६]।

मध्य प्रदेश में चन्देरी भी मुगल काल में मलमल का प्रसिद्ध केन्द्र था, परन्तु १९वी शती में यह उद्योग गिरी अवस्था में पहुँच चुका था। क्योंकि १८६५ में हैजे के प्रकोप के कारण यहाँ के अधिकतर बुनकर मर गये अथवा स्थान छोड़कर अन्य स्थानों पर चले गये[७]। यहाँ कपड़ों में मलमल की साड़ी एवं दुपट्टों की किनारी बहुधा रेशमी या जरी की रहती थी। इंदौर, सारंगपुर तथा ओरछा में भी अच्छे प्रकार की मलमलें बुनी जाती थीं, जिनका प्रयोग पगड़ी इत्यादि के लिए किया जाता था[८]। इंदौर तथा सारंगपुर की मलमलें प्रायः बिना धुले सूत की रहती थीं[९]।

मुगल काल में दिल्ली के शाही कारखानों में कीमती मलमलों का निर्माण होता था। बर्नियर दिल्ली के कारखानों के बारे में लिखता है कि, "इनमें रेशम, किमखाब, पगड़ी पटके तथा पायजामों इत्यादि के लिए इतनी महीन और नाजुक मलमल बुनी जाती है कि एक

१—मुखर्जी, वही, पृ० ३२१
२—बर्डवुड, पृ० २४८
३—वही, पृ० २४८
४—वही
५—मुखर्जी, आर्ट मेनुफैक्चर्स, पृ० ३२०
६—वाट, इण्डियन आर्ट एट देहली, पृ० २८८
७—बर्डवुड, पृ० २४७
८—मुखर्जी, आर्ट मेनुफेक्चर्स, पृ० ३२४
९—वाट, इण्डियन आर्ट एट देहली, पृ० २८९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रात पहनने के बाद नष्ट हो जाती है। कुछ ही घण्टों तक काम में लाये जाने वाले इन कपड़ों क दाम १० या १२ मुहर अथवा इससे भी अधिक होता है[1]।"

पंजाब में कुछ स्थानों पर मध्यम कोटि की मलमलें बुनी जाती थीं परन्तु, रोहतक में महीन तंजेब भी बुनी जाती थीं[2]। २० वीं शती के प्रारम्भ तक यहाँ मलमल बुने जाने के उल्लेख मिलते हैं[3]। दिल्ली में भी मलमल पर्याप्त मात्रा में बुनी जातो थी, जिसकी खपत पंजाब में विशेष रूप से होती थी[4]।

मलमल के विभिन्न प्रकार

सुलतान और मुगल काल के साहित्य में मलमल के अनेक लोकप्रिय प्रकारों के नाम मिलते हैं जो बाद तक प्रचलित रहे। जेम्स टेलर के समय (१८४०) छत्तीस प्रकार की मलमलें बुनी जाती थीं[5]। ये नाम प्रायः उनकी बारीकी तथा विशेषताओं के आधार पर रखे गये हैं जैसे, आबेरवां (बहता हुआ पानी), शबनम (ओस), बाफ्ता (बाफ्त + हवा = बुनी हुई हवा) इत्यादि। कुछ नाम विभिन्न बादशाहों तथा नवाबों की पसन्द और संरक्षण पाने के कारण रख दिये गये प्रतीत होते हैं. जैसे महमूदी, नादिरशाही, अकबरी, जहाँगीरी औरंगजेबी इत्यादि। इनके अतिरिक्त कुछ नाम निर्माण स्थान के आधार पर भी पड़ गये जैसे देवगिरि बिहारी, झमरतली, भड़ूची इत्यादि। मलमल के इन विभिन्न प्रकारों से सम्बन्धित विवरण अकारादि क्रम से नीचे दिया जा रहा है।

१-अकबरी

१८ वीं शती के ग्रन्थों में 'अकबरी' नामक वस्त्र का उल्लेख मिलता है[6]। यह सम्भवतः महीन कीमती मलमल होती थी जो बादशाह अकबर के दरबार में विशेष रूप से लोकप्रिय होने के कारण 'अकबरी' कहलाती थी।

२-अलाबेली[7]

'अलाबेली' ढाका में बनने वाली मलमल का एक प्रकार था। यह मध्यम कोटि की मलमल होती थी। अलाबेली सम्भवतः 'अलबेली' का बिगड़ा हुआ रूप प्रतीत होता है।

१—बर्नियर, ट्रैवेल्स इन दि मोगल इम्पायर (१६५६-१६६८), अनुवादक आर्चिबाल्ड कान्स्टेबल, १८९१ (दूसरा संस्करण १९१४) पृ० २५६

२—मुखर्जी, आर्ट मेनुफेक्चर, पृ० ३२२

३—वाट, इण्डियन आर्ट एट देहली, पृ० २८८

४—वही

५—मुखर्जी, पृ० ११६

६—शर्मा, हनुमान, 'राजपूताने की कला' सरस्वती, भाग २६ अंक २, संख्या ३, १९२५

७—वाटसन, दि टेक्सटाइल मेनुफेक्चर्स एण्ड कोस्ट्यूम्स आफ दी पीपुल आफ इण्डिया, पृ० ७६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३—आब्रवां या आबेरवां

ढाका में बनने वाली श्रेष्ठतम मलमलों में से एक थी[१]। कुछ पारदर्शी वस्त्रों में दोहरी तह करने पर पानी की लहरों के समान झलक मारती है, सम्भवतः इसी विशेषता के कारण इस मलमल का नाम आबेरवां (बहता हुआ पानी) रखा गया। यह नाम ७ वीं शती के साहित्य में उल्लिखित क्षीरोदक[२], समुद्र-हिलोर तथा तथा समुद्र-लहर[३] इत्यादि वस्त्रों का स्मरण कराता है[४]। बारीकी में इस मलमल का, मलमल खास के पश्चात् दूसरा स्थान था। इसकी बारीकी और पारदर्शिता से सम्बन्धित निम्नलिखित दो घटनायें प्रसिद्ध हैं—

१—एक बार बादशाह औरंगजेब अपनी पुत्री जेबुन्निसा को अत्यन्त पारदर्शी कपड़े पहने हुए देखकर बहुत क्रोधित हुए, जब कि उसने आबेरवां मलमल का बना सात पर्त का जामा पहन रखा था।

२—दूसरी अनुश्रुति के अनुसार एक बार नवाब अलावर्दी खां ने एक जुलाहे को ढाका शहर से निकल जाने का दण्ड दिया, क्योंकि उसकी लापरवाही से घास पर फैलाया हुआ आबेरवां का एक पूरा थान गाय घास के साथ चर गयी।

ब्रज भाषा के ग्रन्थ चकत्तावंश-प्रकाश (१८ वीं शती) में उल्लिखित वस्त्र सूची में विभिन्न प्रकार की मलमलों के नाम के साथ 'आगवानी' का उल्लेख है[५], जो आब्रवां (या आब्रवानी) का ही बिगड़ा हुआ रूप प्रतीत होता है। ब्रज-भाषा के भक्ति काव्यों में भी आबेरवां का उल्लेख हुआ है।

१—वाटसन, वही, पृ० ७५

२—(अ) हर्षचरित (सप्तम उच्छ्वास) में एक स्थान पर हर्ष को क्षीरोदक पहने बतलाया है, डा० अग्रवाल, पृ० १६१

(ब) पद्मावत में (१६ वीं शती) में 'चन्दनौटा खीरोदक फारी' का उल्लेख है, डा० अग्रवाल, पद्मावत, पृ० ३२७

(स) वर्णरत्नाकर तथा १५ वीं-१६ वीं शती के गुजराती वर्णकों की वस्त्र सूची में भी क्षीरोदक का उल्लेख है; सांडेसरा, वर्णक समुच्चय, परिशिष्ट-२, पृ० २१६-२१७

(द) गुजराती कवि प्रेमानन्द ने 'कुंवर बाईनुं मामेरू' में लिखा है—'सारू खीरोदक बांधे मूकी डोसी ने समझाव्या जी', बृहद काव्यदोहन, भाग १ पृ० २३५

(य) वैष्णव मन्दिरों में प्रबोधनी एकादशी के दिन 'क्षीरसागर' नामक वस्त्र ठाकुर जी को धारण कराया जाता है।

३—'समुद्र लहरी सोहे तन चीरु' पद्मावत, पृ० ११३

४—पुपुल जयकर का यह मत सही नहीं प्रतीत होता कि आबेरवां जामदानी का प्रकार था, जिसमें लहरें बनी रहती थीं, देखिये—'काटन जामदानी आफ टांडा एण्ड बनारस', ललित कला सं०, ६, १९५९, पृ० ३८

५—चकत्तावंश प्रकाश, चकत्ता, ४३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

४—औरंगजेबी

चकत्तावंश-प्रकाश की 'वस्त्र-भेद सूची' में 'औरंगजेबी' का उल्लेख है[१]। यह सम्भवतः महीन मलमल का ही कोई प्रकार था जो औरंगजेब को पसंद था। समकालीन विवरणों के अनुसार औरंगजेब को तड़क-भड़क पूर्ण वस्त्र नहीं पसंद थे। वह मुख्य रूप से सूती वस्त्र पहनना पसंद करता था। उसके व्यक्तिचित्रों में भी उसे प्रायः पारदर्शी सफेद मलमल का जामा पहने दिखलाया है। 'औरंगजेबी' मलमल सम्भवतः शाही कारखानों के अतिरिक्त ढाका में भी बनती थी।

५—कमीज़

ढाका में बनने वाली मलमल का एक प्रकार था[२]। सम्भवतः यह कुछ गफ प्रकार की मलमल होती थी जिसका उपयोग कमीज आदि बनाने के लिए होता था। मुख्य रूप से विदेशों को निर्यात करने के लिए बनती थी।

६—कम्कनीज़

१७ वीं शती के अंग्रेजी व्यापार सम्बन्धी विवरणों में 'कम्कनीज़' या 'कमेकनीज़' नामक मलमल का उल्लेख है[३] जो बिहार में पटना के समीप बुनी जाती थी। इसकी खपत मुख्य रूप से ईरान में होती थी, परन्तु कभी-कभी ईस्ट-इंडिया कम्पनी इसे लंदन भी भेज देती थी। यहाँ से पुनः यह मलमल अफ्रिका और तुर्की को निर्यात कर दी जाती थी[४]।

७—गंगाजल

आईने-अकबरी में सूती वस्त्रों की सूची में 'गंगाजल' नामक कपड़े का उल्लेख है[५]। टीकाकार के अनुसार यह बंगाल में बुनी जाने वाली महीन मलमल का एक प्रकार था। 'गंगाजल' प्राचीन यूनानी लेखकों द्वारा बंगाल की मलमल के लिए प्रयुक्त नाम 'गेंजेटिक'[६] का स्मरण कराता है। सम्भवतः इसी के लिए वर्णरत्नाकर में 'गंगा सागर' प्रयुक्त हुआ है[७]।

१—चकत्ता० ४३ तथा हनुमान शर्मा, 'राजपूताने की कला', सरस्वती वर्ष २६, भाग २, सं० ३, १९२५

२—वॉटसन, पृ० ७६

३—जान हर्विन, इंडियन टेक्स्टाइल ट्रेड इन दि सेवेन्टीन्थ सेंचुरी, बंगाल, ज० इ० टे० हि० ३, पृ० ६७

४—वही

५—आईने अकबरी, आईन ३२, बलोकमेन पृ० ९४, तथा हरिवंश राय शर्मा द्वारा अनुवादित आईने-अकबरी, आईन ३२

६—शाफ, दि पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी, पृ० ४७

७—वर्णरत्नाकर (सम्पादक एस० के० चटर्जी और बी० मिश्रा, कलकत्ता, १९४२), पृ० २१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अलमोड़ा के लोक गीतों में भी 'गंगा जी' नामक वस्त्र का उल्लेख है[१]। इसकी पहचान भी आईने-अकबरी में उल्लिखित 'गंगाजल' से कर सकते हैं।

८—जंगल खास

ढाका में बुनी जाने वाली मलमल का एक प्रकार था[२]। यह उच्च प्रकार की मलमल होती थी।

९—जाफ़रखानी

यह बिहार में बुनी जाने वाली मलमल का एक प्रकार था। विशेष रूप से लाखोवर (जिला गया) में बनती थी। अंग्रेजी विवरणों के अनुसार यह मध्यम श्रेणी की मलमल होती थी[३]।

१०—जहांगीरी

यह श्रेष्ठ प्रकार की मलमल होती थी जिसका अर्ज एक गज का होता था। सम्भवतः बादशाह जहाँगीर को विशेष रूप से पसन्द थी और इसी आधार पर इसका नाम 'जहाँगीरी' पड़ा। विवरणों के अनुसार यह भी लखोवर में बुनी जाती थी[४]।

११—झंवरतली या झमरतली

१४ वीं शती से १६ वीं शती तक के साहित्य में 'झबरतली' नामक वस्त्र का नाम कई स्थानों पर आया है। इससे सम्बन्धित उल्लेखों से यह प्रमाणित होता है कि यह श्रेष्ठतम मलमलों में एक थी। डा० मोतीचन्द्र के अनुसार यह कीमती मलमल बिहार में झुमरी तलैया नामक स्थान में बुनी जाती थी[५]।

अमीर खुसरो (१४ वीं शती) ने 'झबरतली' तथा 'बिहारी' मलमलों के विषय में लिखा है कि वे पारदर्शी तथा हल्की होने के कारण पहनने पर ऐसी प्रतीत होती हैं मानों गुल्लाला फूल पर चाँदनी तथा गुलाब पर प्रातः कालीन ओस फैली हो[६]। समकालीन जैन ग्रन्थों में भी 'झंवरतली' मलमल का उल्लेख हुआ है। १५ वीं शती के गुजराती वर्णकों में तथा पृथ्वी चन्द्र चरित (सन् १४२१)[७] में इसे 'झमरतली' कहा है।

१—'आडन वीका गंगाजी वागो सिरन वीका प्वतष की पाग' त्रिपाठी, रामनरेश, काव्य कौमुदी, भाग ५ (ग्राम गीत), प्रयाग, सं० १९८६, पृ० ४३

२—वाटसन, पृ० ७६

३—डब्लू फोस्टर द्वारा सम्पादित-इंग्लिश फेक्टरीज् इन इण्डिया, १६१८–२१, पृ० २१३

४—वही

५—डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि०, ९, पृ० १५

६—लाइफ एण्ड वर्क्स आफ अमीर खुसरो, पृ० ७२, डा० मोतीचन्द्र ज० इ० टे० हि० भाग ६, पृ० ८

७—प्राचीन गुर्जर काव्य-संग्रह, बड़ौदा, १९२०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महुआन ने अपने यात्रा विवरण (प्रारम्भिक १५ वीं शती) में 'हिन-पेई-तुंग-तली' का उल्लेख किया है[१]। उसके अनुसार यह तीन फुट चौड़ा और साठ फुट लम्बा गजी के समान कपड़ा होता था। इसका प्रयोग मुख्य रूप से पगड़ी के लिए किया जाता था। डा० मोतीचन्द्र इसकी पहचान 'झमरतली' से करते हैं[२]।

प्रारम्भिक १७ वीं शती के यूरोपीय व्यापार सम्बन्धी विवरणों में 'अम्बरतीज' नामक अच्छे किस्म के सफेद कपड़े का उल्लेख हुआ है[३]। 'अम्बरतीज' 'झमरतला' या 'झंबरतली' का ही बिगड़ा रूप प्रतीत होता है। विवरणों के अनुसार यह कपड़ा पटना के पास बनता था[४], अतः इससे भी यही सिद्ध होता है कि 'झमरतली' तथा 'अम्बरतीज' दोनों एक ही कपड़े होते थे। १७ वीं शती के प्रारम्भिक वर्षों में बड़ी मात्रा में इसका निर्यात इंग्लैंड को होता था जहां से पुनः यह उत्तरी अफ्रीका के देशों को निर्यात कर दिया जाता था। इंग्लैण्ड में इस कपड़े का उपयोग मुख्य रूप से रजाइयों में अस्तर लगाने के लिए होता था[५]। अंग्रेजी विवरणों के अनुसार अर्ज तथा बुनावट की दृष्टि से इसके तीन प्रकार होते थे[६]।

अंग्रेजी व्यापार में 'लखोवरी' नामक कपड़े का उल्लेख मिलता है। जान ईर्विन के अनुसार यह गया जिले में स्थित लखोवर में बुना जाता था और सम्भवतः 'अम्बरतीज' (झमरतली) का ही दूसरा नाम था[७]। 'इंगलिश फेक्टरीज इन इण्डिया' में एक स्थान पर यह विवरण भी है कि 'अम्बरती' नामक कपड़े लखोवर में बुने जाते हैं[८]। गुजराती वर्णकों में 'अमरिया' कपड़े का उल्लेख है जो कि गंगा के समीप बनता था, जैसा कि 'गंगा पारी अमरी' से स्पष्ट है। यह भी सम्भवतः यूरोपीय व्यापार का 'अमरतीज' ही है जो लखोवर में बुना जाता था[९]।

१—फिलिप्स, जार्ज, 'महुआन्स एकाउण्ट आफ दि किंगडम आफ बंगाल'; जनरल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी, १८९५; डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि० भाग ६, पृ० ३९

२—ज० इ० टे० हि० भाग ६, पृ० ३९

३—इंगलिश फैक्टरीज् इन इंडिया, १६१८-१६२१, फोस्टर द्वारा सम्पादित, ऑक्सफोर्ड १६१५, पृ० १६१-१६२ तथा देखिये—जॉन इर्विन, इंडियन टेक्सटाइल ट्रेड इन दि सेवेन्टीन्थ सेंचुरी (पार्ट २) बंगाल, ज० इ० टे० हि० भाग ३, पृ० ६७

४—वही

५—वही

६—वही

७—ज० इ० टे० हि० ३, पृ० ७०

८—वही, पृ० ६७

९—इंडियन हिस्टोरिकल क्वाटरली १९३६, भाग १२, पृ० ६४७-४८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१२–झिलमिल

महीन मलमल का ही एक प्रकार था। पद्मावत[१], चकत्तावंश प्रकाश[२] तथा सुजान-चरित[३] में इसका उल्लेख है। बंगाल में बनने वाले गजी के समान महीन 'झिलमिल' कपड़े का उल्लेख टी० एन० मुखर्जी ने भी किया है[४]।

१३–झोना या झूना

मलमल का यह प्रकार १२ वीं शती से १९ वीं शती तक लोकप्रिय रहा है। डा० मोती चन्द्र के अनुसार मेदिनी (१३ वीं शती) द्वारा उल्लिखित 'झूनो'[५] तथा चाऊ-जू-कुआ (१२ वीं शती) द्वारा उल्लिखित 'योएनो' मुसलमान काल की झूना' या झोना' मलमल ही है[६]।

आईने अकबरी (आईन ३२) में सूती कपड़ों की सूची में 'झोना' का उल्लेख है। वर्ण रत्नाकर में सम्भवतः इसी को 'झूरण' कहा है[७]। चकत्तावंश प्रकाश की सूची में यद्यपि इसका नाम नहीं है, परन्तु अन्यत्र बनारस तथा जलालाबाद में बनने वाली उच्च प्रकार की मलमल 'झूना' का उल्लेख किया गया है[८]। १९ वीं शती के ब्रजभाषा साहित्य में इसके उल्लेखों से प्रतीत होता है कि मुख्य रूप से 'झूना' का उपयोग साड़ी और दुपट्टों आदि के लिए किया जाता था।[९]

१९ वीं शती के मध्य में ढाका में बुनी जाने वाली 'झूना' के विषय में टेलर लिखते हैं कि यह मलमल जाली के समान पारदर्शी बुनी जाती है[१०]। इस समय इसका उपयोग मुख्य रूप से नर्तकियां किया करती थीं[११]। जैसा कि चकत्तावंश प्रकाश से ज्ञात है, ढाका के अतिरिक्त बनारस और अन्य स्थानों में भी 'झूना' बुनी जाती थी।

५१२७

१—'बांस पोर झिलमिल को सारी' पद्मावत (सं० वासुदेव शरण अग्रवाल), पृ० ३२७

२—चकत्तावंश प्रकाश, ४३

३—'बादला दरयाई नौरंगसाई जरकस काई झिलमिल है, 'सुजान चरित, पृ० १५९

४—मुखर्जी, टी० एन०, हैंडबुक आफ इंडियन प्रोडक्ट्स (कलकत्ता, १८८३), पृ० ९

५—डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि० ५, पृ० २७

६—वही, पृ० ३१

७—वर्णरत्नाकर पृ० १२२ तथा डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि०, ६, पृ० २२

८—चकत्ता, २१

९—"झाँपिलियो मुख झोने झूने से झपाक झप"
कवि प्रानसुख (१९ वीं शती का मध्य) रचित काव्य, सुधा सर, भाग १, प्रकाशक जगन्नाथ दास रत्नाकर, बनारस १९४४

१०—टेलर, काटन मैन्युफैक्चर आफ ढाका, पृ० ४४; इर्विन जान, ज०इ०टे०हि० ३, पृ० ७१

११—वाटसन, पृ० ७६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१४—तंजेब

ढाका में बुनी जाने वाली श्रेष्ठ प्रकार की महीन मलमलों में 'तंजेब' को चौथा स्थान प्राप्त था[1]। सुलतान काल और प्रारम्भिक मुगल काल की वस्त्र सूचियों में 'तंजेब' शब्द नहीं मिलता। आईने-अकबरी में यद्यपि वस्त्रों की सूची में इसका नाम नहीं है, परन्तु अन्य स्थान पर उल्लेख है कि बादशाह ने 'नीमतना' का नाम बदलकर 'तंजेब' (शरीर शोभा) रखा। 'तंजेब' शब्द मलमल के अर्थ में सभवतः १७ वीं शती से प्रयुक्त होने लगा। चकत्तावंश प्रकाश की सूची में तनसुख के तुरन्त बाद तंजेब का नाम है। १८ वीं शती के अंग्रेजी व्यापारिक विवरणों[2] तथा समकालीन भारतीय साहित्य में भी इसका उल्लेख है[3]। ब्रजभाषा काव्य[4] तथा लोकगीतों में तंजेब के बने वस्त्रों का उल्लेख इसकी जनसाधारण में लोकप्रियता प्रमाणित करता है। परन्तु कीमती होने के कारण साधारण लोग विवाह आदि विशेष अवसरों पर ही इसका उपयोग करते थे। १७ वीं शती के अन्तिम चरण तथा १८ वीं शती में तंजेब कभी सादा और कभी रेशमी सुईकारी करके इंग्लैण्ड को निर्यात किया जाता था। वहाँ इसका उपयोग पेटीकोट आदि पहनावे के लिए किया जाता था[5]। ढाका के अतिरिक्त 'तंजेब' लखनऊ, रोहतक तथा अन्य कुछ स्थानों पर भी बुनी जाती थी[6]। लखनऊ में इसकी स्थानीय खपत चिकन के लिए विशेष रूप से थी।

१५—तनसुख

यह तंजेब के समान ही महीन मलमल होती थी। आईने अकबरी (आईन ३२, तथा मुगल काल की अन्य वस्त्र-सूचियों में तनसुख का उल्लेख हैं[7]। मैथिली[8], राजस्थानी तथा ब्रजभाषा काव्यों में तनसुख के विभिन्न उल्लेख उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों में इसकी लोकप्रियता बतलाते हैं। इन उल्लेखों से ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय मुख्य रूप से साड़ी के लिए इसका प्रयोग किया जाता था[9]।

१—वाटसन, पृ० ७६

२—इर्विन, जान, ज० इ० टे० हि०, भाग ३, पृ० ७२

३—चकत्तावंश प्रकाश, ४३

४—'विग्रहरूप जुगल के तन पै मृदु तंनजेबी साज', नागरीदास ग्रन्थावली (सं० डा० किशोरी लाल गुप्त), पृ० २०

५—इर्विन, ज० इ० टे० हि० भाग ३, पृ० ७२

६—मुखर्जी, टी० एन०, आर्ट मैन्युफैक्चर्स, पृ० ३२२

७—चकत्ता, ४३

८—'तनसुख सुवसन हिरदय लागि' विद्यापति पदावली (सं० कुमुद विद्यालंकार तथा जयवंशी झा) पृ०९

९—(अ) 'तनसुष की साडी वणि कांचू बन्यों सुचंग', उदयपुर निवासी प्रयागदास कृत 'कपड़ा कुतूहल', वर्णक समुच्चय, परिशिष्ट १, भाग १, पृ० २०८

(ब) 'तनसुख सारी रातो लहंगा…' घनश्याम दास कृत, कीर्तन संग्रह, श्री नारायण तथा जेठानन्द आसनमल पुष्टिमार्गीय ग्रन्थमाला ८, बम्बई, सं० २०११, भाग २, पृ० १२९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाटसन ने तनसुख का उल्लेख नहीं किया। ऐसा प्रतीत होता हैं कि तनसुख को ही बाद में 'तंजेब' कहा जाने लगा। पहले मुख्य रूप से इसका प्रयोग साड़ी इत्यादि के लिए किया जाता था परन्तु, बाद में जब इसके पहनावे सिलवाये जाने लगें तो इसे अकबर द्वारा चलाया नाम 'तंजेब' (शरीर शोभा) दे दिया गया। यह भी हो सकता है कि पहनावे के लिए बनने वाले मलमल के थान तंजेब (शरीर शोभा) और साड़ी, दुपट्टे आदि के लिए बननेवाली वही मलमल तनसुख कहलायी वैसे थीं दोनों एक ही प्रकार की मलमल।

१६–दरंदाम या तरंदाम

यह ढाका में बुनी जाने वाली मध्यम श्रेणी की मलमल थी[१]। १४-१५ वीं शती में सम्भवतः यह महीन प्रकार की मलमल होती थी जिसे राजा महाराजाओं को उपहार स्वरूप भेजा जाता था। जैन-राजतरंगिणी में उल्लेख है कि मांडू और गौड़ के शासक ने काश्मीर के शासक जैन-उलअब्दीन (१४२०-१४७०) को 'दरंदाम' के थान भेजे[२] सम्भवतः जैन-राजतरंगिणी में उल्लिखित 'दरंदाम' के लिए ही १७ वीं शती के अंग्रेजी व्यापार सम्बन्धी विवरणों में 'तेरिदाम' या 'तरंदाम' शब्द प्रयुक्त हुआ है[३]। १७ वीं शती में यह मलमल बड़ी मात्रा में यूरोप को निर्यात की जाती थी।

डा० मोतीचन्द्र के अनुसार 'दरंदाम' दो फारसी शब्दों से बना दरद फैशन तथा अम्म-सार्वलौकिक (अर्थात् जनसाधारण में प्रचलित कपड़ा)। जेम्स टेलर के अनुसार अरबी एवं फारसी के दो शब्दों 'तरह' प्रकार तथा 'अंदाम' शरीर को मिलाकर 'तरंदाम' शब्द बना[४]।

ढाका के अतिरिक्त यह मलमल लखनऊ में महमूदनगर में भी बुनी जाती थी, जिसका प्रयोग 'चिकन' के लिए किया जाता था[५]।

१७—दुदामी या दुदांमी[६]

चकत्तावंश प्रकाश की वस्त्र सूची में विविध प्रकार की मलमलों के नामों के बीच 'दुदामी' का उल्लेख है। कपड़ा-कुतूहल[७] तथा कपड़-बतीसी[८] में भी इसका उल्लेख है। १८ वीं शती के

(स) 'अतरोटा अंगिया अमोल, तनसुख सारी अति झीनी', कीर्तन संग्रह भाग २, पृ० १३२
(द) 'छींट छबीली तनसुख सारी' हरिदास का पद, कीर्तन संग्रह, भाग २, पृ० २६

१—वाटसन–पृ० ७६
२—ज० इ० टे० हि०, भाग ६, पृ० ४२
३—इर्विन जान, ज० इ० टे० हि० भाग ३, पृ० ७२
४—वही
५—मुखर्जी, टी० एन०, पृ० ३२६
६—दो दाम मुगल सिक्का, चूंकि पूरे थाने का वजन दो दाम भर होता था, सम्भवतः इसलिए दुदामी या दुदामी कहलाया ?
७—यहां 'दुमांमी' शब्द निःसंदेह 'दुदामी' के लिए प्रयुक्त हुआ है; सांडेसरा, वर्णक समुच्चय १, परिशिष्ट १, पृ० २०७ तथा २१२
८—यहां 'दुदामी' ही है, वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक अन्य राजस्थानी ग्रंथ में 'खासा', 'भयरव', 'बहादरी' इत्यादि मलमल के प्रकारों के तुरन्त बाद 'दुदामो' का उल्लेख है[१]। नागरीदास की रचनाओं में भी दुदामी' का उल्लेख है[२]। यह शब्द दरंदाम (तरंदामी) का ही बिगड़ा रूप प्रतीत होता है।

१८—देवगिरि

सुलतान काल में देवगिरि दौलताबाद) महीनतम सूती मलमल के प्रमुख केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध हो चुका था जिसका वणन ऊपर किया जा चुका है। यहाँ की बनी मलमल 'देवगिरि' या 'देवगिर' कहलाती थी।

१९—नयनसुख

'नयनसुख' जैसा कि नाम से ज्ञात है उच्च-प्रकार की मलमल थी, जो मुख्य-रूप से ढाका में बुनी जाती थी[३] और 'नयनसुक' तथा 'नयनसुक' के नाम से यूरोप को निर्यात की जाती थी[४]। वहाँ ओढ़ना, बिछोना तथा पहनावे के लिए इस मलमल का उपयोग होता था।

२०—पंचतोलिया

आईने-अकबरी (आईन ३२) चारत वंश-प्रकाश में तथा अन्य स्थानों पर सूती वस्त्रों के साथ 'पंचतोलिया' का उल्लेख हुआ है[५]। यह संभवतः ढाका में बुनी जाने वाली 'मलमल-खास' के समान ही महीनतम मलमल होती थी, जिसके पूरे थान का वजन पांच तोला होता था। समकालीन कवियों ने भी इसका उल्लेख किया है[६]। जयपुर राज्य की कुछ पुरानी बहियों में भी पंचतोलिया का उल्लेख है।

२१—बदनखास

वाटसन के अनुसार ढका में बुनी जाने वाली मध्यम श्रेणी की मलमल होती थी[७]। परन्तु जैसा कि नाम से ज्ञात होता है मुगलकाल में यह श्रेष्ठ प्रकार की मलमल रही होगी।

२२—बाफ्ता या भड़ोंची

'बाफ्ता' दो शब्दों के संयोग से बना है—बाफ्त (बुना हुआ) तथा हवा अर्थात् 'बुनी हुई हवा'[८]। जेम्स टेलर ने सम्भवतः इसी को 'वोवेन एयर' कहा है[९]।

१—पाठक पद्मधर, 'मध्ययुगीन कुछ वस्त्रों और आभूषणों की चर्चा' सरस्वती अक्टूबर १९६४, पृ० ३४३; यहाँ संभवत: गलती से 'बदामी' छपा प्रतीत होता है।

२—'दुदांमो इकतई पोसे, बसंती फेटा कजबंद,, नागरीदास ग्रंथावली, पृ० १७०

३ - वाटसन, पृ० ७६

४—इर्विन, जान, ज० इ० टे० हि०, ३ पृ० ७०

५—शर्मा, हनुमान, राजपुताने की कला, सरस्वती, भाग २६, खंड २, सं० ३, १९२५

६—'सहज सेत पंचतोरिया पहिरत अति छवि होति' बिहारी सतसई, ३४०

७—वाटसन, पृ० ७६

८—अग्रवाल, वा० श०, हर्षचरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ० ६९

९—वाटसन, पृ० ७५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आईने-अकबरी (आईन-३२) में सूती वस्त्र की सूची में 'बाफ्ता' का उल्लेख है। १७ वीं शती में यूरोपीय व्यापारिक विवरणों के अनुसार यह कोमती सफेद सूती कपड़ा होता था जो गुजरात में भड़ुच और नवसारी में बुना जाता था[१]। प्राचीन गुजराती वर्णकों में 'भडूची वास्ता[२]' तथा चकत्तावंश-प्रकाश (चकत्ता ४३) की सूची में 'वाफ्ता' के बाद 'भड़ोची' का उल्लेख है। १४ वीं शती के लेखक नूवयरी ने भडुच में बनने वाले कपड़े-'बरोजी' (भडोची) का उल्लेख किया है[३], जिसकी पहचान बाफ्ता से की जा सकती है।

महीनतम बाफ्ता मुख्य रूप से भडुच में ही बनते थे[४]। १६१४ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का एक कर्मचारी एक पत्र में लिखता है—'ब्रोच इज दि चीफ प्लेस इन इण्डिया फार बाफ्तास एण्ड कॉटन यार्नस'[५]। बाफ्ता की खपत मुख्य रूप से दक्षिण-पूर्व एशिया और अफ्रीका के देशों में होती थी[६]। महीन होने के कारण ये यूरोप को जलवायु के अनुकूल नहीं थे, अतः वहां इनका निर्यात कम होता था[७]।

बंगाल की मलमल खास के समान ही गुजरात के महीनतम बाफ्ता राजाओं को भेंट में दिए जाते थे[८]। सफेद के अतिरिक्त ये रंगोन भी होते थे। काले और नीले बाफ्ता का उल्लेख ईस्ट इंडिया कम्पनी के विवरणों में कई स्थान पर हुआ है। पुर्तगालो व्यापार में भी बाफ्ता का प्रमुख स्थान था[९]।

२३—बहादुरसाही या बहादुरी—

यह सम्भवतः ढाका में बनने वाली महमूदी नामक मलमल के समान ही कोई सूती कपड़ा होता था। आईने-अकबरी को सूती वस्त्र-सूची में 'बहादुरशाही'[१०] तथा मुगलकालीन राजस्थानी ग्रन्थों[११] में 'बहादुरी' का उल्लेख है।

२४—बैरम या बैरमी—

एक प्रकार का महीन सूती कपड़ा होता था। 'बैरमी' तुर्की शब्द है जिसका अर्थ है 'उच्च प्रकार का'। सुलतानकाल में कोमती महीन सूती वस्त्रों में इसकी गणना होती थी।

१—लेटर्स रिसोव्ड बाइ ईस्ट इंडिया कम्पनी फ्राम इट्स सर्वेन्ट्स इन दि ईस्ट, भाग १, पृ० २८ तथा इर्विन, जान, ज० इ० टे० हि०, १, पृ० २५

२—वर्णक समुच्चय, पृ० २१७

३—डा० मोतीचन्द्र ज० इ० टे० हि०, भाग ६, पृ० ११

४—लेटर्स रोसीव्ड ''भाग २,पृ० २५६; भाग ३.पृ० ३२;भाग ४, पृ० २३६,३२६ तथा भाग ५ पृ० ११०

५—वही, भाग ३, पृ० ३३

६—वही, भाग १, पृ० २६, ७०, ७१; भाग २, पृ० ३२, ४५, १६४, २००, २५६, ३३७; भाग ५, पृ० २५७ तथा भाग ६ पृ० २८८

७—वही, भाग १, पृ० २६,

८—लेटर्स रिसीव्ड ''', भाग ३, पृ० १२५; भाग ४ पृ० १६५ तथा १७६

९—वही, भाग ५, पृ० ६३

१०—आईन, ३२

११—पाठक, पद्मधर, वही, सरस्वती, अक्टूबर १९६४, पृ० ३४३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इब्नबतूता लिखता है कि मुहम्मद तुगलक ने अद्वितीय सौन्दर्य के बैरमी नामक सूती वस्त्रों के सौ थान चीन के सम्राट को उपहार स्वरूप भेजे[१]।

युरोपीय व्यापार सम्बन्धी विवरणों में बैरम या बैरमी का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ है[२]। इसकी खपत विशेषरूप से दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में होती थी[३]। कभी-कभी रंगीन बैरमी का निर्यात भी इन देशों को किया जाता था[४]।

२५—भैरव, भैरो या भयरव

भैरव फारसी शब्द 'भिरूं' से बना। अलाउद्दीन द्वारा जिन कीमती वस्त्रों के मूल्य नियंत्रित किये गये, उनमें 'भैरव' भी सम्मिलित था। डा० मोतीचन्द्र के अनुसार 'बैरम' या बैरमी को ही देशी भाषा में 'भैरम' या 'भैरव' कहा जाने लगा[५]। आईने अकबरी की सूती वस्त्र सूची में इसी के लिए 'भीरो'[६] तथा समकालीन राजस्थानी एवं गुजराती साहित्य में 'भैरव'[७] 'भयरव'[८] तथा 'भइरव'[९] प्रयुक्त हुआ है। यह सम्भवतः मलमल का ही कोई प्रकार था, जिसका उपयोग चोली, कुर्ता आदि बनाने के लिए होता था। यह कपड़ा कहाँ बुना जाता था यह ज्ञात नहीं है[१०]। ऐसा प्रतीत होता है कि यह मलमल गुजरात में बनती थी।

२६—मनसख या मनसुख

गुजराती वर्णकों में 'मनसष' या 'मनसुष' का नाम आया है[११]। यह सम्भवतः 'तनसुख' और 'नयनसुख' के समान ही महीन मलमल का कोई प्रकार था।

२७—मलमल-खास या मलमल-शाही

महीन सूती वस्त्रों के लिए सामान्य नाम मलमल था, जिसका उल्लेख मुगल-काल के सभी ग्रन्थों में मिलता है। ढाका में बुनी जाने वाली मलमलों में सर्वश्रेष्ठ और सबसे महीन

१—डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि०, भाग ६, पृ० ११

२—लेटर्स रिसीव्ड···, भाग १ पृ० २६ तथा ७५; भाग २, पृ० ३२; भाग ३, पृ० ३२; भाग ४, पृ० ३२

३—वही, भाग १, पृ० ७५

४—वही, पृ० ३२ तथा भाग ४, पृ० ३०६

५—डा० मोतीचन्द्र, ज०इ०टे०हि०, भाग ६, पृ० २५

६—आईन ३२

७—वर्णक-समुच्चय, परिशिष्ट १, कपड़ा-कुतूहल, पृ० २०८ तथा पृथ्वीचन्द्र चरित (१४२१), प्राचीन गुर्जर काव्य-संग्रह (बड़ोदा १९२०), पृ० १०२

८—वर्णक समुच्चय पृ० २१७ तथा देखिए सरस्वती, अक्तूबर १९६४, पृ० ३४१; १८ वीं शती के एक राजस्थानी ग्रन्थ की 'भला वस्त्र सूची' में भयरव का उल्लेख हुआ है।

९—'म्हाकउ भइरव कंचयउ भीनउ छइ पोक, वीसलदेव रास (१६ वीं शती), सं० माता प्रसाद गुप्त तथा अगरचन्द नाहटा, प्रयाग, १९६०, पृ० २०८

१०—हरिवंश राय शर्मा के अनुसार यह कपड़ा खानदेश में बुना जाता था (आईने अकबरी का हिन्दी अनुवाद, इलाहाबाद १९६६)

११—डा० मोतीचन्द्र, ज०इ०टे०हि० ६, पृ० ३१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मलमल 'मलमल खास' कहलाती थी[1]। इसका उपयोग बादशाह, नवाब तथा राजा-महाराजा करते थे। ढाका से प्रतिवर्ष दिल्ली दरबार में बड़ी मात्रा में मलमल-खास जाता थी। इसी को गुजराती वर्णकों में 'मलमल शाही' कहा गया है[2]। मुगल कालीन ग्रन्थों में 'खास' या 'खासा' भी इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है[3]। फारसी शब्द 'खास' का अर्थ है–चुनी हुई वस्तु अथवा विशेष वस्तु।

ढाका के अतिरिक्त इस प्रकार की मलमल अवध नवाबों के समय अवध में भी बुनो जातो थी[4]। दिल्ली के शाही कारखानों में भी मलमल खास बुनो जाती थी, जिसका उल्लेख बर्नियर ने किया है[5]। बर्नियर के अनुसार यह मलमल इतनी महीन और नाजुक बनती थी कि वह एक रात पहनने के बाद नष्ट हो जाती थी।

मुगल काल में बनने वाली मलमल खास की बारीकी का अनुमान इससे भी लगाया जा सकता है कि १५० या १६० हाथ लम्बे सूत का वजन केवल एक रत्ती होता था। १९ वीं शती के मध्य तक सुनार गाँव में कुछ कारीगर इतना महीन सूत कात सकते थे कि १७५ हाथ लम्बे सूत का वजन एक रत्ती होता था[6]। एक विवरण के अनुसार जहाँगीर काल में १५×१ गज के एक थान का वजन केवल ९०० ग्रेन होता था[7]।

संभवतः मलमल खास के लिए ही टेवेर्नियर अपने भारत यात्रा विवरण में लिखता है कि ईरान के राजदूत मुहम्मद अली बेग ने भारत से लौटकर शाह साफी (१६२८-१६४१) को शुतुरमुर्ग के अण्डे के आकार का मोतियों से मढा हुआ नारियल का कोपरा भेंट किया, जिसमें अत्यन्त झीना ६० हाथ लम्बा मलमल की पगड़ी का एक थान रखा हुआ था[8]। पूरे थान का एक छोटी अंगूठी में से गुजर जाना इसकी बारीकी की पहचान थी[9]।

मुगल युग के चित्रों में अनेक आकृतियों को अत्यन्त पारदर्शी सफेद वस्त्र पहने दिखलाया गया है जो निःसंदेह मलमल खास ही हैं। जामा, अंगरखा, चोली आदि पहनावे के अतिरिक्त इसका उपयोग दुपट्टा, पगड़ी आदि के रूप में भी होता था।

बोल चाल की भाषा में इसके लिए खासा शब्द प्रयुक्त होता है। लोक गीतों में 'खासा के जामा' और पटकों का उल्लेख अनेक स्थलों पर हुआ है[10]। ब्रज भाषा की रचनाओं में भी खासा का उल्लेख है—

१—वाटसन, पृ० ७५; वाट, इण्डियन आर्ट एट देहली, पृ० २८३

२—वर्णक-समुच्चय, १९१–५

३—आईने, ३२

४—वर्डवुड, पृ० २४७

५—बर्नियर, ट्रेवेल्स इन दि मुगल एम्पायर, पृ० २५९

६—वाटसन, पृ० ६५

७—वाट, पृ० २८२

८—वाटसन, पृ० ७३

९—सुलेमान सौदागर, पृ० ५४ तथा मुखर्जी, टी० एन०, ए हैंडबुक आफ इंडियन प्रोडक्ट्स, पृ० ६

१०—घोड़ी वाले को किसने बुलाया, तेरी घोड़ी में चंपा रोली।

अंग तेरे खासे का जामा, तेरे बंधो में चंपा रोली॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"पिछौरा खासा को कटि बाँधे, वे देखो आवत नद नंदन नैन कमल सर सांधें"[१]

यह मलमल नैपाल में भी संभवतः लोकप्रिय थी। बाद में वहाँ 'खाष्टो' नाम से अलंकृत महीन सूती कपड़ा बुना जाने लगा जिसकी चर्चा आगे जामदानी वाले अध्याय में की जा रही है।

यूरोपीय व्यापार में इसके लिए 'कासा' शब्द मिलता है[२]। दक्षिण-पूर्व एशिया, मध्य-एशिया पश्चिम एशिया तथा यूरोप के विभिन्न देशों को ये कपड़े निर्यात किए जाते थे[३] तथा व्यापारियों द्वारा इन देशों के राजाओं को भेंट किए जाते थे[४]। १६०२-३ में दिल्ली में हुई प्रदर्शनी में ढाका की बनी मलमल खास के कुछ नमूने भी प्रदर्शित हुए। सर जार्ज वाट के अनुसार १० गज के एक थान की कीमत स्तर के अनुसार १५० से ६०० रूपये तक थी।

२८–महमूदी या महमूदशाही

आईने अकबरी की सूती वस्त्र सूची में[५] तथा बाद की अन्य वस्त्र सूचियों में 'महमूदी'[६] या 'महमूदीशाही[७]' का उल्लेख हुआ है। चकत्तावंश प्रकाश में 'भड़ौची' के बाद महमूदी का उल्लेख है। डा॰ मोतीचन्द्र के अनुसार यह बंगाल में बनने वाली महीनतम मलमलों में से एक थी जिसका नाम बंगाल के शासक जदुग्रलिग्रास मुहम्मदशाह (१४१४-१४३१) के नाम पर 'महमूदी-शाही' पड़ा[८]।

ढाका के अतिरिक्त अवध में टांडा और नवाबगंज में बुनी जाती थी[९]। कुछ मात्रा में हरदोई में भी 'महमूदी' बुने जाने का उल्लेख मिलता है[१०]।

२९–मिहिरकुल

यह महीन प्रकार का कीमती सूती वस्त्र होता था। आईने अकबरी की सूती वस्त्रों की सूची में इसका उल्लेख है[११] चकत्तावंश प्रकाश के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि 'मिहिर कुल' मुख्य रूप से बनारस, जलालाबाद तथा आस-पास के अन्य क्षेत्रों में बुना जाता था[१२]। सम्भवतः इसी के लिए अंग्रेजी व्यापार में 'मर्कुली' या 'मर्कूलीस' शब्द प्रयुक्त हुआ है। जान इर्विन के अनुसार यह उच्च प्रकार का सफेद सादा कपड़ा होता था जो लखनऊ तथा

१—परमानन्द स्वामी कृत एक पद में से।
२—लेटर्स रिसीव्ड भाग १, पृ० ७५
३—वही भाग १ पृ० ७६
४—वही, भाग ६ पृ० २८८
५—आईन० ३२
६—वर्णक समुच्चय, भाग १, पृ० २१७ तथा सरस्वती, अक्तूबर, १६६४ पृ० ३४३
७—वर्णक-समुच्चय, १८०।५
८—डा० मोतीचन्द्र : ज०इ०टे०हि०, ६ पृ० ११
९—बर्डवुड, पृ० २४७-२४८
१०–वही पृ० २४८
११–आईन० ३२
१२–चकत्ता, २१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जयपुर में बुना जाता था[१]। १७ वीं शती में यह बड़ी मात्रा में लन्दन को निर्यात किया जाता था[२]।

३० राधानगरी

यह भी बंगाल में बनने वाली मलमल का एक प्रकार था। इसमें बीच-बीच में बटे हुए सूत डालकर डोरिया के रूप में बनाया जाता था। राधानगर स्थान बंगाल में हुगली जिले स्थित है। यहां मुख्यतः अच्छे किस्म के डोरिया बनते थे। राधानगरी डोरिया का उल्लेख स्व० जगन्नाथदास रत्नाकर[३] के एक काव्य में हुआ है। जयपुर महल की कुछ पुरानी बही-पोथियों में भी राधानगरी कपड़े का नाम मिलता है[४]।

३१—शबनम

ढाका में बुनी जाने वाली मलमल का एक सर्वश्रेष्ठ प्रकार था[५]। यह नाम सम्भवतः १८वीं शताब्दी से मलमल के अर्थ में प्रयुक्त होता आरहा है[६]। इसके पूर्व की वस्त्र-सूचियों में 'शबनम' का उल्लेख नहीं है। इस मलमल के विषय में कहा गया है कि घास पर बिछाने पर यह ओस के समान पारदर्शी लगती थी। शबनम के १६ गज १४ इंच लम्बे तथा ३४ इंच चौड़े थान का वजन ६३ औंस होता था[७]।

३२—श्रीबाफ

महीन मलमल का एक प्रकार था, जो बुरहानपुर तथा दक्षिण के अन्य केन्द्रों में बुना जाता था[८]। इसका उल्लेख डार्टे बार्बोसा ने भी किया है[९]। गुजराती 'वस्त्राभरण नामावली' में 'श्रीसाफ' और 'श्रीबाफ' का उल्लेख है[१०]। आईने अकबरी तथा चकत्तावंश प्रकाश में 'सिरीसाफ' या 'श्रीशाफ' का उल्लेख हुआ है[११]। 'श्रीसाफ' भी सम्भवतः 'श्रीबाफ' के समान महीन मलमल होती थी। १८ वीं शती के अन्य राजस्थानी ग्रन्थों में भी 'सिरिसाफ' का उल्लेख है[१२]।

१—ईर्विन, जान, ज० इ० टे० हि० १, पृ० २६

२—वही

३—"ढाके की मलमल सुडोरिया राधा नगरी। विष्णुपुर मुर्शिदाबाद पांटबर पगरी॥
जगन्नाथ दास रत्नाकर की रचना 'कल काशी' में से

४—इस जानकारी के लिए मैं डा० चन्द्रमणि सिंह की आभारी हूँ।

५—वाटसन, पृ० ७६

६—चकता, ४३, सरस्वती अंक २६, भाग २, सं० ३

७—वाटसन, पृ० ७६

८—ईर्विन, जान, ज० इ० टे० हि० १, पृ० ३०

९—डा० मोतीचन्द्र, ज० इ० टे० हि०, पृ० ४६

१०–वर्णक-समुच्चय, परिशिष्ट २, पृ० २१७

११–चकता ४३ तथा आईन ३१

१२–सरस्वती, अक्टूबर १९६४, पृ० ३४३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अन्तर्गत श्रीबाफ का निर्यात पूर्वी और भूमध्य सागरीय बंदरगाहों को किया जाता था[१]। १६०९ में ईस्ट इंडिया कम्पनी के एक कर्मचारी ने पत्र में लिखा है—'यह महीन और हलका कपड़ा होता है, जिसका मूर लोग अपने 'केम्बे' या कपड़े बनाते हैं। यह कपड़ा 'बार्बरी' में १८ या १९ हाथ लम्बे तथा एक गज चौड़े थान के रूप में बेचा जाता है[२]। व्यापारिक विवरणों के अनुसार 'श्री बाफ' सफेद[३] और रंगीन[४] दोनों रूप में निर्यात किया जाता था।

३३—सरकार अली

महीन मलमल का एक प्रकार था। बारीकी में यह ढाका में बुनी जाने वाली आबेरवां तथा शबनम इत्यादि मलमलों की श्रेणी की होती थी। वाटसन ने बारीकी में इसका चौथा स्थान रखा है[५]। यह मलमल प्रारम्भ में स्थानीय नवाबों के लिए बुनी जाती थी[६]। इसके २० गज × १ गज थान का वजन ६¾ औंस होता था।

३४—सालू

१७–१८वीं शती की प्रायः सभी वस्त्र-सूचियों में इसका उल्लेख हुआ है[७]। सूती, सफेद, महीन वस्त्र होता था, परन्तु कभी-कभी लाल, पीले, नीले आदि रंगों में रंगकर प्रयुक्त होता था[८]।

३५—शेला या सेला

महीन सूती वस्त्र होता था। ओढ़नी एवं दुपट्टों के रूप में इसका उपयोग होता था[९]। जरी की किनारी और आंचल वाले महीन सूती साफे को भी सेला कहा जाता था। गुजरात में महीन सूती जमीन में जरी की कामदार साड़ी, दुपट्टों के लिए भी शेला प्रयुक्त होता है। ईस्ट इंडिया कम्पनी के विवरणों के अनुसार सेला महीन सूती कपड़े होते, जिसमें कभी-कभी धारियां

१—लेटर्स रिसीव्ड, भाग ४, पृ० १९४; भाग ५, पृ० २२६

२—लेटर्स रिसीव्ड, भाग १, पृ० २९

३—वही, पृ० ७५

४—ईर्विन जान, ज० इ टे० हि०, १, पृ० ३०

५—वाटसन, पृ० ७६

६—वही

७—कपड़ा कुतूहल, वर्णकसमुच्चय, परिशिष्ट १, चकत्ता ४३; सुजानचरित, द्वितीय अंक पृ० १५०; गुजराती कवि प्रेमानन्द ने 'कुंवर बाई नुं मामेरू' में इसका उल्लेख किया है, बृहत् काव्य दोहन, भाग १, पृ० २२५ तथा २१५

८—प्रेमानन्द, वही तथा लेटर्स रिसीव्ड २, पृ० ३१

९—'कोने शैला चणिया जी', प्रेमानन्द, बृहत्-काव्य दोहन, १, पृ० २३५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी होती थीं[१]। अंग्रेजी-व्यापार विवरणों में इसके लिये सीला[२], सेला[३], झेला[४], सेल्ला[५], चेला[६] इत्यादि शब्द प्रयुक्त हुये हैं।

सालू और शेला या सेला सम्भवतः एक ही प्रकार के कपड़े होते थे। यूरोपीय विवरणों के अनुसार सालू अच्छे किस्म की महीन मलमल होती थी, जिसका उपयोग पगड़ी के लिए किया जाता था[७]। मुख्य रूप से बुरहानपुर में बुना जाती थी और तुर्की तथा उत्तरी अफ्रीका के देशों में इसकी खपत होती थी[८]।

३६--संजरखानी

चकत्तावंश प्रकाश में शबनम के बाद 'संजरखानी' का उल्लेख है[९]। सम्भवतः मलमल का ही कोई प्रकार था। आईने अकबरी में कीमती सूती वस्त्रों के साथ उल्लिखित है[१०]।

३७—सरबंद या सिरबंद

पगड़ी के लिए बनने वाली महीन मलमल 'सरबद' या सिरबंद' कहलाती थी। आईने अकबरी की सूती वस्त्र सूची, चकतावंश प्रकाश तथा समकालीन अन्य ग्रन्थों में इसका उल्लेख है[११]। इसकी खपत मुख्य रूप से एशिया और अफ्रिका के मुसलमान देशों में होती थी। ढाका में सुनारगांव में बड़ी मात्रा में 'सिरबन्द' के थान तैयार होते थे[१२]। लन्दन के बाजारों में भी इसकी बड़ी मात्रा में खपत थी[१३]।

३८—सौगाती

ढाका में बुनी जाने वाली महीन मलमल का एक प्रकार था[१४]। श्री मुखर्जी के अनुसार यह सौगात (भेंट) में दी जाने वाली महीनतम मलमल थी, अतः 'सौगाती' कही जाने लगी[१५]।

१—लेटर्स रिसीव्ड --१३, पृ० ८००
२—वही, भाग १, पृ० ७४
३—वही, भाग २, पृ० ३२
४—वही, पृ० १९८, पृ० २०० तथा भाग ६, पृ० २७५
५—वही, भाग ६, पृ० ४५
६—वही, भाग १३, पृ० ८००
७—इर्विन, जान, ज० इ० टे० हि० १, पृ० ३०
८—वही
९—चकत्ता, ४३
१०—आईन० ९१
११—वही, चकत्ता, ४३ तथा वर्णकसमुच्चय, परिशिष्ट २, पृ० २७९
१२—लेटर्स रिसीव्ड, भाग १३, पृ० २७९
१३—इर्विन, ज० इ० टे० हि० ३, पृ० ७१
१४—मुखर्जी, टी० एन०, हैण्डबुक आफ इण्डियन प्रोडक्ट्स, पृ० ९
१५—वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आईने अकबरी में 'सर्वगाती' (एक प्रकार के जामे) का उल्लेख हुआ है। 'सौगाती' शब्द 'सर्वगाती' का बिगड़ा हुआ रूप प्रतीत होता है। सम्भवतः इस प्रकार को मलमल का उपयोग मुख्य से 'सर्वगाती' (जामे) के लिए होता था इसलिए यह 'सर्वगाती' या 'सौगातौ' कहलायी।

३९--शर्वती

ढाका की महीन मलमलों में से एक थी[१]। ढाका के अतिरिक्त लखनऊ में महमूदनगर में भी बुनी जाती थी[२]। यह 'मलमल खास' के समान ही महीन मलमल थी[३], जिसके एक थान का दाम ३००) तक होता था[४]।

मलमल अब पूर्णतः इतिहास की वस्तु हो गयी है। कुछ स्थानों में आज भी मोटे प्रकार की मलमल बुनी जाती है, परन्तु सूत तैयार करने के ढंग और कर्घे इत्यादि प्रत्येक वस्तु में अन्तर आ जाने के कारण इसको तैयार करने के पुराने तरीकों की जानकारी के लिए पूर्णतः १९ वीं शती में लिखी गयी पुस्तकों का आधार लेना पड़ता है। जेम्स टेलर[५] तथा फोर्बज वाटसन[६] की पुस्तकें इस क्षेत्र में विशेष रूप से सहायक हैं। इन्होंने ढाका में बुनी जाने वाली मलमल के लिए सूत की कताई धुलाई और बुनाई इत्यादि क्रियाओं का विस्तार से वर्णन किया है, जिसे संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है।

१९ वीं शती में लिखे गये ईस्ट इंडिया कम्पनी के विवरणों से ज्ञात है कि ढाका के आस-पास उत्तम प्रकार की कपास पैदा की जाती थी[७]। १८२६ में लिखी गयी ईस्ट इंडिया कम्पनी की एक रिपोट में यहाँ पैदा होने वाली उत्कृष्ट कपास का वर्णन करते हुए लिखा है कि 'बैराती' कपास पूर्व में पैदा होने वाली कपासों में सर्वश्रेष्ठ प्रकार की होती है, जो ढाका के उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों में पैदा की जाती है। इस कपास के रेशे महीन, रेशम के समान चिकने मुलायम तथा मजबूत होते हैं। ढाका की महीनतम मलमलों के लिए इसी कपास का सूत काम में लाया जाता था[८]। थोड़ी मात्रा में उत्पन्न होने के कारण यह कपास बहुत मंहगी मिलती थी। मोटे प्रकार की मलमलों के लिए बंगाल में पैदा होने वाली 'बौधा कपास' से कता सूत काम में लाया जाता था[९]। जेम्स टेलर से ज्ञात होता है कि १९ वीं शती में ढाका में उत्पन्न होने वाली कपास का स्तर गिर चुका था[१०]।

१—मुखर्जी, हैंड बुक ऑफ इंडियन प्रोडक्ट्स, पृ० ६
२—वही तथा मुखर्जी, आर्ट मेनुफेक्चर्स आफ इंडिया, पृ० ३२१
३—मुखर्जी, टी० एन०, हैण्डबुक आफ ...... पृ० ६
४—वही
५—टेलर जेम्स, ए डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल एकाउंट्स आफ दि काटन मैनुफैक्चर्स आफ ढाका इन बंगाल, १८५१
६—वाटसन, फोर्बज, दि टेक्सटाइल मैनुफैक्चरर्स एण्ड द कोस्ट्युम्स आफ दि पीपुल आफ इंडिया. लन्दन १८६६
७—वाट् सर जार्ज, कामर्शियल प्रोडक्ट्स आफ इंडिया, पृ० ५९४
८—वाट्, कामर्शियल प्रोडक्ट्स..., पृ० ५९४-९५
९—वही
१०—वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कपास को चुनकर सफाई, धुनाई और पौनी बनाकर कताई इत्यादि का काम प्रायः स्त्रियां करती थीं। कपास की सफाई बहुत ही सावधानी से की जाती थी। धूल, सूखी पत्तियां, मोटे रेशे इत्यादि बोवालो मछली के जबड़े से बनी कंघी से अलग कर दिये जाते थे। तब बिनौले से रुई अलग करके और धुन के पूनियाँ बना ली जाती थीं। पूनियों को धूल इत्यादि से बचाने के लिए कूचिआ मछली की मुलायम चमड़ी में लपेट कर रखा जाता था।

महीनतम सूत की कताई के लिए अत्यन्त धैर्य, कुशलता और सावधानी की आवश्यकता होती है। अतः महीनतम सूत कातने का काम प्रायः ३० वर्ष की उम्र तक की स्त्रियां करतीं थीं[१]। १९ वीं शती के अन्त में ढाका में महीनतम सूत कातने वाली स्त्रियों की संख्या बहुत कम रह गयी। १८८८ में टी० एन० मुखर्जी ने ढाका के समीप धमराई गांव में महीनतम सूत कातने वाली स्त्रियों का उल्लेख किया[२], जो उपयुक्त मजदूरी देने पर महीनतम सूत कात सकती थीं। मजदूरी अधिक होने के कारण इस प्रकार का महीन सूत का मूल्य ५०) प्रति आउंस पड़ जाता था[३]।

महीन सूत की कताई के लिए वातावरण में लगभग ८२ डिग्री नमी होना आवश्यक माना जाता था। अतः यह काम प्रायः प्रातः १० बजे तक तथा शाम को ३-४ बजे के बाद से सूर्यास्त तक किया जाता था। महीनतम सूत प्रातः सूर्योदय के बाद तभी तक काता जाता था जब तक कि घास पर ओस रहती थी। धूप तेज होने के बाद आवश्यक नमी बनाये रखने के लिए तकली के नीचे पानी भरा एक छिछला बर्तन रख लिया जाता था।

ढाका के बुनकर महीनतम सूत की परख केवल देख कर अथवा सूत की लम्बाई हाथ से नाप कर और रत्तियों में तौल कर कर लेते थे। ढाका से दिल्ली दरबार को भेजी जाने वाली महीनतम मलमल के १५० या १६० हाथ लम्बे सूत का वजन केवल १ रत्ती होता था[४]। १९ वीं शताब्दी में सुनारगांव में महीनतम सूत काता जाता था। यहां कते १७५ हाथ लम्बे सूत का वजन १ रत्ती होता था[५]। ढाका में काते जाने वाले इससे भी महीन सूत का उल्लेख टेलर ने किया है, जो उनके समक्ष नापा और तौला गया[६]।

एक कत्तिन प्रतिदिन प्रातः और सन्ध्या सूत कातने पर एक महीने में आधे तोले से अधिक सूत नहीं कात सकती थी। महीनतम सूत ८) रुपया प्रति तोला के हिसाब से बिकता था[७]।

कत्तिनों के समान ही ढाका के बुनकर भी अपने कार्य में कुशल थे। बुनकर सभी हिन्दू थे। वे परिश्रमी और फुर्तीले थे तथा अटूट धैर्य से कार्य करते थे। स्पर्श और उंगलियों के अटकल से वे सूत की बारीकी का अंदाजा लगा लेते।

१—वाटसन, पृ० ६४

२—मुखर्जी, आर्ट मैन्युफैक्चरर्स पृ० ३१८-३१९

३—वही पृ० ३१९

४—वाटसन, पृ० ६५

५—वही

६—वही

७—वही, पृ० ६६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बुनकरों को सूत लच्छियों के रूप में अथवा तिल्लियों पर लपेटा हुआ मिलता था जिसे वे दो भागों में बांट कर, महीनतम सूत बाने के लिए और शेष ताने के लिए रख लेते। ताने के सूत को तैयार करने की क्रिया कई दिन तक चलती थी। इसे तीन दिनों तक पानी में डूबो कर रखा जाता था। प्रतिदिन पानी दो बार बदला जाता था। चौथे दिन पानी में से निचोड़ कर निकाल लिया जाता था तथा चर्खी पर चढ़ाकर लच्छियाँ बना ली जाती थीं और पुनः पानी में भिगो कर और निचोड़कर धूप में सुखा दिया जाता था। इसके पश्चात् इन्हें दो दिन तक कोयले के चूर्ण अथवा दीये की कालिख घुले पानी में भिगो कर रखा जाता था। तीसरे दिन स्वच्छ पानी में धोकर छाया में सुखा दिया जाता था। सूखने पर लच्छियों को पुनः एक रात पानी में भिगोया जाता और दूसरे दिन तख्ते पर फैलाकर चूने का चूर्ण मिला हुआ चावल का माड़ हाथ से चढ़ा दिया जाता।

माड़ चढ़ी लच्छियाँ चर्खे पर लपेट कर सुखा ली जाती थीं और तब ताने के लिए तैयार किये गये इस सूत को पुनः तीन भागों में बांट लिया जाता था। सबसे अच्छा दायीं ओर, मध्यम प्रकार का बायी ओर तथा शेष बीच में लगाने के लिए रखा जाता था।

बाने के सूत को तैयार करने की क्रिया बुनाई के दो दिन पूर्व ही प्रारम्भ की जाती थी। इसको तैयार करने के लिए एक दिन की बुनाई के लिए आवश्यक सूत को लेकर २४ घण्टे पानी में भिगो कर रखते थे, दूसरे दिन निचोड़ कर, चर्खे पर चढ़ा कर तथा माड़ लगा कर छाया में सुखा दिया जाता। यह क्रिया प्रतिदिन तब तक जारी रहती थी जब तक कि पूरा थान नहीं बन जाता था।

ताना तैयार करने की क्रिया खुले मैदान में की जाती थी। इसके लिए कपड़े की लम्बाई के अनुसार चार बांस और कई जोड़ी खूटियाँ इस प्रकार गाड़ी जाती कि ४ फुट की दूरी में दो पक्ति बन जाये (चित्र सं० $\frac{9}{2}$)। अब बुनकर अपने दोनों हाथों में चर्खी या सलाइयों पर लपेटा हुआ सूत लेकर, एक छोर से दूसरे छोर तक, बाँस और खूटियों की दोनों पंक्तियों के बीच से घूमता हुआ (चित्र संख्या $\frac{9}{2}$ में दिखलाये ढंग से) सूत लपेटता जाता। डोरियां और चारखाने इत्यादि के लिए बीच-बीच में मोटा बटा हुआ सूत लगा दिया जाता था।

अब ताने को कंघी में (रीड) फसाने और अगेला पर लपेटने का कार्य प्रारम्भ किया जाता था। महीनतम मलमल बुनने के लिए काम में लायी जाने वाली ४० इंच चौड़ी कंघी में २८०० तक दाँते रहते थे। कंघी में फसाने के लिए ताने के सूत के एक छोर को छत पर लटका दिया जाता था। नीचे लटकते हुए छोरों के दोनों ओर आमने-सामने दो कारीगर बैठकर रस्सियों की सहायता से लटकती हुई कंघी की प्रत्येक तिल्ली में दो दो सूत फसाकर नीचे गांठ बांध देते थे (चित्र संख्या $\frac{9}{3}$)। सभी सूत कंघी में फसाने के बाद नीचे ५-६ सूत की गांठ बाँधकर फंदेनुमा बना लिये जाते और तब उन फंदों में एक बाँस फसा दिया जाता।

ताने को अगेला में लपेटने की क्रिया तीन-चार व्यक्तियों द्वारा खुले मैदान में सम्पन्न की जाती थी। यहाँ ताने को फैलाकर और प्रत्येक सूत को अलग-अलग व्यवस्थित करके ताने को अगेला में लपेट दिया जाता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसके बाद ताने को तागे के बने फंदों (या बेसर) में डालकर कर्घे में बैठा दिया जाता और बुनाई प्रारम्भ की जाती थी। कर्घा पुराने ढंग का और सादा होता था। कर्घा प्रायः बुनकर के घर में या अलग एक छप्पर के नीचे रहता था। इसके लिए जमीन में निश्चित दूरी पर चार बांस गाड़ दिये जाते जो ऊपर दो आड़े बासों द्वारा जुड़े रहते। इन्हीं आड़े बासों पर बीचो-बीच एक अन्य बांस रहता था, जिसके सहारे कंघी और बेसर आदि डोरियों की सहायता से लटका दिये जाते। चार खड़े बांसों के सहारे नीचे तूर और अगेला बांध दिये जाते थे (देखिये चित्र संख्या ३) । कर्घे पर ताना एक गज से अधिक नहीं खोला जाता था अर्थात् अगेला और तूर के बीच की दूरी प्रायः एक गज रहती थी। बुनते समय महीन सूत ढरकी और कंघी इत्यादि से घिस कर टूटे नहीं इसलिए इन उपकरणों को सदा तेल लगाकर चिकना रखा जाता था। गर्म मौसम में तानों को खुश्की के कारण टूटने से बचाने के लिए ताने के नीचे छिछले बर्तनों में पानी भरकर रख दिया जाता था, जिससे वातावरण में आवश्यक नमी बनी रहे। महीनतम मलमल को बुनते समय वातावरण में ८२ डिग्री तापमान तथा पर्याप्त नमी रहना आवश्यक समझा जाता था, अतः दोपहर की तेज धूप के समय प्रायः बुनने की क्रिया रोक दी जाती। महीनतम मलमलों की बुनाई मुख्य रूप से आसाढ़, सावन और भादों के महीनों में की जाती थी। क्योंकि इस ऋतु में वातावरण में नमी अधिक रहने के कारण महीन सूत कम टूटता था।

ताने के समान ही बुने हुए कपड़ों की सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाता था। १०" या १२" कपड़ा बुन जाने पर उस पर चूने का पानी छिड़क कर तूर पर लपेट लिया जाता था, जिससे कोड़े इत्यादि न काटे और कपड़ा गन्दा न हो।

एक थान (२० गज × १ गज) को बुननें में जुलाहे की कुशलता और मलमल की बारीकी के अनुसार कम या अधिक समय लगता था। प्रायः दो कारीगर एक साथ काम करते थे। साधारण मलमल के एक थान को बुनने में प्रायः १०-१५ दिन, मध्यम कोटि के थान को २० दिन तथा महीन मलमल के एक थान को बुनने में ३० दिन या उससे अधिक लगते थे। श्रेष्ठ महीन मलमल के एक थान को बुनने में ४०-६० दिन तक लग जाते थे। श्रेष्ठतम प्रकार के 'मलमल खास' या 'सरकार अली' के आधे थान को बुनने में ५ या ६ महीने लग जाते थे जिसकी कीमत ७० से ८० रुपये तक होती थी[१]।

तैयार हुए मलमल के थानों की धुलाई का काम ढाका शहर से दूर गांवों में होता था। अबुल फजल ने सुनारगांव स्थित चतरशुंडा नामक स्थान का उल्लेख किया है, जहां का पानी उस समय मलमल की धुलाई के लिए सर्वोत्तम समझा जाता था[२]। इस पानी से कपड़े धोने पर एक खास प्रकार की सफेदी आ जाती थी। श्री टेलर के समय ढाका के समीप नारायणडोहा और तेजगांव के बीच तक के क्षेत्र में धुलाई का काम मुख्य रूप से किया जाता था[३]। इन

१ – वाटसन, पृ० ७०

२—वही

३—वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थानों में अंग्रेज, डच और फ्रेंच फैक्टरियों में बने कपड़ों की धुलाई बड़ी मात्रा में की जाती थी[1]।

नारायणडीहा में धोने का पानी कूओं से प्राप्त किया जाता था। धुलाई का काम प्रायः वर्षा ऋतु में किया जाता जब कि इन कूओं में जल स्वच्छ और भरपूर रहता था। मोटे किस्म के कपड़ों को पानी में भिगो कर और पीट कर साफ किया जाता था, परन्तु महीन मलमलों को पीटा नहीं जाता था, क्यों कि पीटने से उनके महीन सूत को क्षति पहुँचने का डर रहता। उन्हें कुछ घंटे सज्जीमाटी लगाकर रखने के बाद घास में फैलाकर कभी-कभी पानी छिड़क दिया जाता। आधा सूखने पर उनको खौलते पानी की भाप दी जाती थी (देखिये चित्र संख्या ३)। भाप देने की क्रिया शाम से दूसरे दिन प्रातःकाल तक जारी रहती थी। इसके बाद कपड़ों को पुनः सज्जी माटी के घोल में डुबोकर मैदान में फैला दिया जाता और रात को पुनः भाप दी जाती। यह क्रिया १० से १२ दिन तक दोहरायी जाती थी जब तक कि कपड़ा पूर्णरूप से सफेद निखर न जाता। अन्तिम दिन चूने के पानी मिले हुए स्वच्छ जल में धो डाला जाता था[2]।

धुलाई के लिए उपयुक्त महीने जुलाई से नवम्बर होते थे। इस समय पानी स्वच्छ रहता है और वातावरण में धूल नहीं रहती। धोबी सभी हिन्दू थे। कपड़ों की धुलाई के दाम जितनी बार भाप दी गयी हो उसके अनुसार कम या अधिक निश्चित थे। कलफ सहित धुलाई की कीमत ३० से १६० रुपया सैकड़ा तक होती थी[3]।

व्यापारी के पास पहुँचने के पूर्व मलमल का प्रत्येक थान कई कारीगरों के हाथ से गुजरता। धोते समय खिचे हुए तारों को तुरदीह ठीक करते थे। ये नागफनी वृक्ष के कांटों से बनी कंघी से खिचे हुए तारों को ठीक कर सही स्थान पर ला देते थे।

धुलाई के समय टूटे हुए तारों को जोड़ना और गाठें इत्यादि हटा देना 'रफूगार' का काम होता था। ये प्रायः मुसलमान होते थे रफूगार इतने कुशल और सधे हुए हाथ वाले होते थे कि कभी-कभी टूटे हुए ताने अथवा गलती से लगाये हुए मोटे मोटे ताने को बदलने के लिए २० गज के पूरे थान का सूत खींचकर उसके स्थान पर दूसरा बैठा देते। तैयार थान के आंचल में जरी का काम करना तथा व्यापारिक चिन्ह (प्राइवेट मार्क्स आफ मैनुफैक्चरर्स) आदि काढ़ना इत्यादि काम भी रफूगार ही करता था। अधिकतर रफूगार अफीम के नशे में बारीक काम करते थे। १९ वीं शती के मध्य इन रफूगारों के लगभग १५० परिवार ढाका में थे।

'दाग-धोबी' तैयार मलमल के थान में पड़ गये जंग आदि के दागों को साफ करता था। इसके लिए 'अमरौला' वृक्ष के रस, घी, चूना और सज्जी के घोल का प्रयोग किया जाता।

'कुंदीगार' का काम कपड़े पर कलफ करना था। यह कपड़े को पीटकर और घोटकर चिकना करता, इसके बाद उन पर लोहा किया जाता था। इस्त्री करने वाले भी प्रायः सभी मुसलमान थे। इस्त्री करने के बाद 'तुरदीह' उसकी तह कर देता, और 'बस्ताबन्ध' उसको दो तख्तों के बीच रखकर रस्सियों से बांध देता था।

१—वाटसन, पृ० ७०

२—वही, पृ० ७१

३—वही पृ० ७२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुराने जमाने में महीन मलमल के थानों को बांस की नलियों में रखकर व्यापारिक स्थानों को ले जाया जाता था[१]। १६२६ में मनरिक अपने यात्रा विवरण में ढाका में बनने वाली मलमल खास का वर्णन करते हुए लिखता है कि व्यापारी पूरे थान को बांस की नली में रखकर कोराजेन, ईरान, तुर्की और अन्य कई देशों को ले जाते हैं[२]। बांस की नलियों में रखने के कारण ही पृथ्वीचन्द्र चरित में इसे 'नली बद्ध'[३] और पद्मावत में 'बांस पोर'[४] कहा गया है। मुगल काल में तरह-तरह से सोने, चाँदी और मोतियों से अलंकृत बांस की नलियों में इन कपड़ों को रखकर शाही दरबार में भेजा जाता था।

विशिष्ट व्यक्तियों को भेंट दी जाने वाली मलमलों को भी इसी प्रकार की अलंकृत नलियों में रखकर भेंट किया जाता था। टेवर्नियर ने भी मोतियों से मढ़ी हुई नारियल की खोल में रखकर मुहम्मद अली बेग द्वारा ईरान के बादशाह को मलमल का ६० हाथ लम्बा पगड़ी का थान भेंट करने का उल्लेख किया है।

जैसा कि आगे कहा जा चुका है जहाँगीर काल में सर्वश्रेष्ठ मलमल के एक थान (१५ गज × १ गज) का वजन केवल ९०० ग्रेन होता था तथा उसका दाम ४०० रुपये तक होता था[५], परन्तु १९ वीं शती के अन्त तक में इतने ही बड़े ही महीन मलमल के थान का वजन १६०० ग्रेन होता था[६]।

वाटसन ने अपनी नमूनें की पुस्तकों में महीनतम मलमल के नमूने लगाए हैं[७]। इसमें से एक ६ गज × ३५ के टुकड़े का वजन ४ औंस था[८]।

भारत कला भवन में ढाका की महीनतम मलमल के कुछ थान संग्रहीत हैं, जिनकी सख्या, वजन और लम्बाई चौड़ाई की तालिका नीचे दी जा रही है।

संचय पजिका संख्या	लम्बाई	चौड़ाई	१ से०मी० में ताने की संख्या	१ से०मी० में बाने की संख्या	वजन
१०।१२२	१७ मीटर ४४ से०मी०	८५ से०मी०	३०	२८	१७९ ग्राम
१०।१२१	१७ मीटर	८५ से०मी०	३२	२९	२२२ ग्राम
१० १३२	१७ मीटर ३० से०मी०	८६ से०मी०	३०	३१	२१५ ग्राम
१ ।४२६	१६ मीटर ४४ से०मी०	८८ से०मी०	३१	३९	२३९.५ ग्राम*

१—वाटसन, पृ० ७३

२—इर्विन, जान, ज० इ० टे० हि० ३, पृ० ६८

३—पृथ्वीचन्द्र चरित, पृ० १३६

४—पद्मावत, पृ० ३२६,

५—इर्विन, जान, ज० इ० टे हि० ३ पृ० ६५ तथा बर्डवुड, पृ० २४९

६—बर्डवुड, पृ० २४९ तथा मुखर्जी टी० एन० हैंडबुक आफ इंडियन प्रोडक्ट्स, पृ० ७

७—वाटसन, क्लेक्शन आफ स्पेसिमेन्स आफ टेक्सटाइल मेनुफेक्चर आफ इण्डिया, सेकेण्ड सीरीज (बम्बई केन्द्रीय पुस्तकालय में स्थित)

८—वही, देखिए सं० ८६४ तथा ८६७

* उक्त सूची में पं० सं० १०।१२२, १०।१२१ तथा १०।४२६ के मलमल के थानों में एक छोर पर बादला से कामदानी की हुई है। अतः उसका वजन भी इसमें सम्मिलित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत में मलमल उद्योग के पतन के कारण

१८ वीं शती के अन्त में इग्लैण्ड में मलमल तैयार की जाने लगी तथा १९ वीं शती में आते-आते भारत को इसका निर्यात होने लगा। प्रारम्भ में उच्चवर्ग ने इसे शौक से अपनाया। धीरे-धीरे आम लोगों में भी अंग्रेजी मलमल की लोकप्रियता बढ़ी। दिन पर दिन विदेशी कपड़ों की बढ़ती मांग ने भारतीय मलमल की खपत कम कर दी। १९ वीं शती के अन्त तक तो ढाका में यह स्थिति हो गयी कि आदेश देने पर तथा कुछ रुपया पेशगी के रूप में देने पर ही जुलाहे अच्छे प्रकार को महीन मलमल बुनना स्वीकार करते।

१९ वीं शती के उत्तरार्ध में मलमल के साथ-साथ अंग्रेजी सूत भी भारत में आने लगा। यह विदेशी सूत देशी की अपेक्षा कहीं अधिक सस्ता पड़ता था, अतः जुलाहों में इसका प्रचलन बढ़ा। इस प्रकार पहले ढाका में घर घर में जो कताई का काम होता था वह कम होता गया। असंख्य कारीगर बेरोजगार हो गये इनमें से कुछ ने कृषिकर्म अपना लिया और अनेक उद्योग-धन्धों को खोज में अन्य स्थानों को जा बसे। इस प्रकार ढाका की जनसंख्या दिन प्रतिदिन घटती गयी। १८५७ में ढाका शहर की जनसंख्या दो लाख थी, जो १९ वीं शती के अन्त में घटकर अस्सी हजार ही रह गयी[1]।

अंग्रेजी व्यापार नीति ने तो भारतीय सूती वस्त्र उद्योग को पूर्णतः समाप्त कर देने का प्रयत्न किया। विदेशी मलमल आयात कर मुक्त था, जबकि भारतीय वस्त्रों के निर्यात पर करों का भार बढ़ता ही गया। उसी प्रकार विदेशी सूत और कपास को कर-मुक्त रखा गया परन्तु देशी माल पर कर बढ़ा दिये। इस तरह की व्यापारिक नीति के परिणामस्वरूप बाजारों में विदेशी माल की वृद्धि और देशी माल की खपत कम होना स्वाभाविक ही था।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के कर्मचारियों द्वारा बुनकरों पर किये जाने वाले अमानुषिक अत्याचार भी भारतीय मलमल उद्योग के पतन का एक कारण था। कारीगर कम्पनी के एजेन्टों के अतिरिक्त अन्य किसी को मलमल नहीं बेच सकते थे। ऐसा करने पर उन पर कोड़े बरसाये जाते, उन्हें काठ में ठुकवा दिया जाता तथा भारी जुर्माना देना पड़ता। इन अत्याचारों से दुःखी होकर कारीगरों ने महीन मलमल बुनना छोड़ दिया।

देशी राजाओं और नवाबों की रियासतों का अन्त होना भी सूती वस्त्र उद्योग के पतन का प्रमुख कारण था। कारीगर अपने संरक्षकों की सुरुचिपूर्ण पसंद के अनुकूल समय और मूल्य की चिन्ता किये बिना कलात्मक वस्त्र बुनते और इसके बदले में उन्हें उचित पारिश्रमिक के अतिरिक्त विभिन्न उपहार और जमीन जायदात आदि देकर प्रसन्न रखा जाता। परन्तु रियासतों के समाप्त होने पर कारीगरों का यह सहारा भी जाता रहा। अब वे कीमती कलात्मक वस्त्र बुनना छोड़कर साधारण जनता की आवश्यकता के अनुसार सस्ते वस्त्र बुनने लगे। इस प्रकार उपर्युक्त विभिन्न कारणों से भारत में युगों से चला आ रहा मलमल उद्योग बीसवीं शती के आते-आते पूर्णतः समाप्त हो गया।

१—हाथ को कताई-बुनाई, पृ० ५४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जामदानी

'जामदानी' फारसी शब्द है[1] जो कर्घे पर कसीदाकारी कर के अलंकृत किये हुये मलमल के लिये प्रयुक्त होता आ रहा है। इस प्रकार के वस्त्रों के लिये यह शब्द कब से प्रयुक्त होने लगा यह कहना कठिन है। मुगलकाल की वस्त्र-सूचियों में 'जामदानी' शब्द नहीं मिलता। श्रीमती पुपुल जयकर के मतानुसार मुख्य रूप से जामे के लिए बुना जाने के कारण इस प्रकार का वस्त्र 'जामदानी' कहा जाने लगा[2]। यही मत राय कृष्णदास जी का भी है। परन्तु इस मत के संदर्भ में यह प्रश्न उठता है कि इस ढंग के बने वस्त्रों में तो साड़ी, पटके, दुपट्टे, चौकोरा आदि भी मिलते हैं। इस प्रश्न के उत्तर में राय कृष्णदास जी का कहना है कि प्रारम्भ में इस प्रकार के वस्त्र केवल जामे के लिए ही बनते रहे होंगे, अतः 'जामदानी' कहलाने लगे और बाद में जब साड़ी, दुपट्टे आदि भी इस ढंग के बनने लगे तब भी उनके लिये यही नाम प्रचलित रहा।

वास्तव में 'जामदानी' शब्द भी 'कामदानी' (जरी के तारों से हल्की कसीदाकारी करके बनाया हुआ वस्त्र) के समान बना प्रतीत होता है। जामदानी में फूल-पत्तियों का अलंकरण ताने में एक के बाद एक (आल्टरनेटिव) बुनकर बनाया जाता था। बनारस के कारीगर इस तरह से बनाये गये अलंकरण को 'दंपच' की बुनाई कहते हैं[3]। इस ढंग से बने हुये वस्त्रों में भांते कपड़े की सतह में जमी हुई सी प्रतीत होती है। संभवतः इसी कारण ये जामदानी कहे जाने लगे। किमखाब जैसे वस्त्रों में कर्घे पर बनी भांते सतह से उभरी हुई रहती हैं। इस प्रकार से उभरा हुआ अलंकरण बनाने की पद्धति 'उत्तू' कहलाती है। इस संदर्भ में यह बता देना भी प्रसंगोचित होगा कि अहमदाबाद और पैठन की 'आसावरी' साड़ियों तथा काश्मीरी तिल्लीकार शालों में भी जामदानी के समान 'दंपच' में भांते बनाई जाती थीं, जो कपड़े की सतह में जमी हुई प्रतीत होती हैं।

जामदानी में सफेद महीन कपड़े की जमीन में सफेद रंग के ही अतिरिक्त सूत (एक्स्ट्रा वेफ्ट) के बाने से कर्घे पर ही भांतें बनाई जाती थीं। इस प्रकार मोटे और महीन सूत के माध्यम से सफेद रंग की ही दो रंगतों द्वारा अद्भुत प्रभाव उत्पन्न किया जाता था। कभी-कभी सफेद सूत के साथ-साथ रंगीन तागों या जरी का प्रयोग भी अलंकरण के लिये किया जाता[4]।

१—स्टेइंगस, एफ०, पर्सियन-इंग्लिश डिक्शनरी, पृ० ३५१; यहाँ इसका अर्थ है कर्घे पर कसीदाकारी किया हुआ वस्त्र।

२—जयकर, पुपुल, काटन जामदानीज़ आफ टांडा एंड बनारस, ललितकला, सं० ६, अक्टूबर १९५९, पृ० ३७

३—अखिल भारतीय हथ कर्घा संस्थान द्वारा संचालित विवर्स सर्विस सेंटर में इसके लिये 'इनले' शब्द प्रयुक्त होता है।

४—श्री जान इर्विन ने जामदानी के संबन्ध में लिखा है 'मस्लिन ब्रोकेडेड विथ कलर्ड सिल्क्स' (ज० इ० टे० हि०, ३ पृ० ७०) जो सही नहीं है। पुरानी कीमती जामदानियों के वास्तविक नमूनों में कभी रंगीन रेशमी तागों का प्रयोग अलंकरण के लिये नहीं हुआ बाद में सस्ती जामदानियों में रंगीन रेशम का प्रयोग होने लगा था, जिन्हें सही अर्थों में जामदानी नहीं कह सकते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर्घे पर दंपच में कसीदाकारी करके वस्त्रों को अलंकृत करने की पद्धति अंग्रेजी में 'ट्वील टेपेस्ट्री' कहलाती है। 'जामदानी' शब्द फारसी होने के कारण कुछ विद्वान इस पद्धति को ईरान से आया समझते हैं। जान इविन के अनुसार यह पद्धति तुर्किस्तान से भारत आयी[१]। प्राचीन संस्कृत साहित्य में आये उल्लेखों के आधार पर अनेक विद्वानों का विश्वास है कि इस प्रकार से कर्घे पर भांत बनाने की पद्धति भारत में अति प्राचीन काल से चली आ रही है। इनके मतानुसार कौटिल्य द्वारा अर्थशास्त्र में उल्लिखित 'वानचित्र' इसी पद्धति से बनी शालों के लिये प्रयुक्त हुआ है[२]। डा० मोतीचन्द्र के अनुसार संस्कृत बौद्ध-साहित्य में उल्लिखित 'चित्र-विरली'[३] तथा 'पुष्प-पट'[४] भी संभवत: इसी अर्थ में प्रयुक्त हुये हैं। हर्ष चरित्र में एक स्थान पर देवी लक्ष्मी को फूलों और पत्तियों की भांतों से युक्त सफेद स्वच्छ वस्त्र पहने बतलाया है[५]। 'पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी' में उल्लिखित 'नेबुला' भी सम्भवत जामदानी काम का वस्त्र होता था, जिसमें सफेद महीन मलमल की जमीन में सफेद सूत से बूंददार भांतें बनी रहती थीं जो देखने में आकाश गंगा के समान लगती थीं

उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर श्रीमती पुपुल जयकर का मत है कि यद्यपि यह पद्धति प्राचीन काल से भारत में चली आ रही थी परन्तु, मुसलमानों के पूर्व अलंकरण के लिए नक्शे का प्रयोग नहीं किया जाता था[६]। अतः उनके मतानुसार नक्शे के प्रयोग की प्रथा विदेश से आयी। उल्लेखों से प्रमाणित है कि मुगल काल में ईरान से कुशल नक्शेबन्दों को भारत बुलाकर बसाया गया था[७]।

भारत में इस पद्धति की बुनाई की प्राचीनता के सम्बन्ध में मतभेद होते हुए भी यह तो निस्सन्देह कहा जा सकता है कि मुगलकाल में इसका पर्याप्त विकास हुआ। इस्लाम धर्म में रेशमी वस्त्र वर्जित होने के कारण तथा भारत की गर्म जलवायु के कारण मुसलमान शासकों ने विभिन्न प्रकार के कलात्मक सूती वस्त्रों के उत्पादन और विकास को प्रोत्साहित किया। विभिन्न संग्रहालयों में सुरक्षित मुगलकाल के भारी जरी और किमखाब के वस्त्र जहाँ एक ओर मुगल शासकों के तड़क-भड़क पूर्ण दरबारी वैभव के प्रतीक हैं, वहीं सूती सफेद, महीन परन्तु कीमती जामदानी के वस्त्र उनके निजी जीवन की सादगी और सुरुचिपूर्ण कलाप्रिय स्वभाव का परिचय देते हैं। ढाका की सर्वश्रेष्ठ और कीमती जामदानियां मुगल बादशाहों के लिए जाती थीं[८]।

मुगलकाल में इन सफेद सादे परन्तु कलात्मक और कीमती कपड़ों की लोकप्रियता का अनुमान संग्रहालयों में स्थित बड़ी मात्रा में जामदानी के नमूनों के अतिरिक्त इस युग के चित्रों

१ — इर्विन, जान, शाल्स, लंदन १९५५, पृ० २

२—अर्थशास्त्र, गणपति शास्त्री द्वारा संपादित, पृ० १९३ तथा डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे०भू०, पृ० ५१

३—डा० मोतीचन्द्र, प्रा० भा० वे० भू०, पृ० ९४

४—वही. पृ० ९९

५—डा० वा० श० अग्रवाल, हर्ष चरित, पृ० ६१

६ — जयकर, पुपुल, ललित कला सं० ६

७—आईने अकबरी में घियास नामक कुशल नक्शेबंद का उल्लेख है जो ईरान से आकर यहां बस गया था।

८—वाटसन, पृ० ७९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से भी लगाया जा सकता है। मुगल, राजस्थानी और पहाड़ी चित्रों में अनेक आकृतियों को अलंकृत सफेद, महीन, झीने या सफेद जमीन पर जरी के अलंकारयुक्त वस्त्र पहने दिखलाया है[१], जो निस्सन्देह जामदानी है। कुछ चित्रों (स्याह कलम) में विविध रंगों के नाम के साथ-साथ जामे आदि में 'जामदानी' लिखा है। यूरोपीय व्यापार-विवरणों में जामदानी के उल्लेखों[२] से विदेशों में इसकी लोकप्रियता प्रमाणित होती है। अरब व्यापारियों द्वारा ईरान, मिस्र और टर्की को बड़ी मात्रा में जामदानी निर्यात की जाती थीं। वहां इसका प्रयोग पगड़ी के लिए किया जाता[३]।

जामदानी के प्रमुख केन्द्र

बंगाल में ढाका तथा नदिया, उत्तर प्रदेश में टांडा (फैजाबाद जिले में), जायस (रायबरेली जिले में) तथा बनारस और मध्य प्रदेश में ग्वालियर जामदानी के प्रमुख केन्द्र रहे हैं।

ढाका

महीन मलमल के साथ-साथ ढाका अलंकृत मलमल (फीगर्ड मस्लिन) या जामदानी के लिए भी प्रसिद्ध था[४]। सर्वश्रेष्ठ मलमल के समान ही कीमती जामदानियों के निर्माण और व्यापार पर भी सरकार का एकाधिकार होता था[५]। सरकार की ओर से प्रत्येक प्रकार की जामदानियों की कीमत निर्धारित थी। निर्धारित मूल्य से अधिक को जामदानियों को सर्व साधारण में नहीं बेचा जा सकता था। ऐसा करने पर कड़ा दण्ड दिया जाता था[६]। विदेशी व्यापार के लिए सरकारी दलाल नियुक्त थे, जिनके माध्यम से युरोपोय व्यापारी माल खरीदते थे।

जामदानी बुनने के लिए ताने और बाने का सूत उसी प्रकार तैयार कर लिया जाता था जिस प्रकार कि सादा मलमल का किया जाता था। बुनाई के ढग का विवरण टेलर तथा वाटसन ने दिया है[७], जो संक्षेप में इस प्रकार है :

एक कर्घे पर प्रायः दो कारीगर एक साथ काम करते थे। भांत बनाने के लिए कागज पर बने नक्शे का प्रयोग किया जाता था। भांतें तिलियों में लपेटे अपेक्षाकृत मोटे सूत या अतिरिक्त बाने (एक्स्ट्रा वेफ्ट) से बनाई जाती थी। इसके लिए आकृति के अनुसार आवश्यक दूरी में ताने गिन कर यह सूत बुन दिया जाता था। पूरी पंक्ति में भांत के अनुसार सूत फंसाने

१ - आर्ट आफ इंडिया एण्ड पाकिस्तान, प्लेट१५०, सं० ८४८

२—इर्विन, जान, ज०इ०टे०हि० ३, पृ० ७०

३ - बनर्जी, एन०एन०, काटन फेब्रिक्स आफ बेंगाल, जर्नल आफ इंडियन आर्ट ८, संख्या ६८, १८९९

४—वाटसन ने इसके लिए लिखा है—

'फ्राम देयर कम्प्लिकेटेड डिजाइन्स दे हैव आलवेज कन्स्टिट्यूटेड द मोस्ट एक्स्पेन्सिव प्रोडक्शन आफ दि ढाका लूम', वाटसन, पृ० ७९

५—वाटसन, पृ० ७९

६—वहीं

७—वही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के बाद ढरकी से बाना दूसरी ओर फेंक कर बुन दिया जाता। इस प्रकार प्रत्येक बार बुनने के पूर्व अतिरिक्त बाना (एक्स्ट्रा वेफ्ट) डिजाइन की चौड़ाई के अनुसार कम या अधिक ताने में डाला जाता था। अलंकरण के सूत को ताने में बुनने के लिए ढाका के कारीगर बांस का नोकदार सूआ रखते थे। पूरा होने पर महीन मलमल की सफेद जमीन में मोटे सफेद सूत से उभरा अलंकरण सफेद ही रंग की दो रंगतों द्वारा अद्भुत प्रभाव उत्पन्न करता था।

ढाका में बनने वाली जामादानी के प्रकारों में थान, साड़ी, दुपट्टे, रूमाल या चौकोरा आदि प्रमुख हैं। थान का उपयोग जामा, अंगरखा, कुरता, टोपी इत्यादि पहनावे सिलवाने के लिए किया जाता था। ये साधारणतः १० गज × १ गज की लम्बाई-चौड़ाई के बनते थे। परन्तु जामा और अंगरखे के लिए कीमती प्रकार की जामदानियां प्रायः सवा तीन गज के टुकड़े के रूप में बुनी जातीं थी। इनमें बूटे-बूटियों के अलावा पूरे में जाल और बेल का अलंकरण भी प्रचलित था।

कभी-कभी जामे और अंगरखों के लिए बनने वाली बूटीदार जामदानियों में बूटियों के बीच-बीच सुनहली या रुपहली बादला से बूदों की कसीदाकारी की जाती और पीठ तथा आस्तीनों पर पानाकार में अलंकरण बनाया जाता। किनारों पर बेल और दामन में कोनिया भी बादल से बनाया जाता। इस तरह बादला से कामदानी किये हुए जामदानी के कुछ जामे भारत कला भवन के संग्रह में सुरक्षित है।

१९वीं शती के अंत में जामे के लिए बनने वाली जामदानियों के अलंकरण में लाल, पीले, हरे, केशरी और नीले आदि रंगीन सूत का प्रयोग भी होने लगा। प्रायः नीले या लाल सूत की बूटे-बूटियाँ बनायी जाती (फलक ६) परन्तु कभी-कभी चार-पांच चटकीले रंगों से पूरे में फूल-पत्तियों का जाल रहता (फलक ४ चित्र सं० ३)। इस प्रकार की रंगीन जामदानियों में अलंकरण और बुनावट दोनों में पतन के लक्षण तो स्पष्ट दिखाई देते ही हैं, साथ ही लोगों की रुचि में क्रमशः किस तरह गिरावट होती गयी इसका ज्ञान भी होता है।

जामदानी की साड़ियों में सफेद तंजेब की जमीन में सफेद सूत से प्रायः गोलाकार बूटियों का घना भराव तथा बीच-बीच में फर्दी बूटी या बूंदों का छिड़काव रहता। किनारे में लगभग ८ या ९ से०मी० की चौड़ाई में दोनों ओर से मुठरे या चूड़ी-कगना[1] से बंधी हुई दोहरी घुमावदार बेल के ऊपर झालर बनायी जाती। दोनों ओर के आंचल में बड़े-बड़े चौकोर कोनिया बनाये जाते, जिनमें छोटी-बड़ी कैंरियों के साथ-साथ फूल पत्तियों का भी संयोजन रहता था (फलक २)। कभी-कभी ये कोनिया इतने बड़े रहते कि दोनों के बीच की दूरी एकाध बित्ता ही रहती। आंचल को बांधने वाले फीते (बार्डर) में अधिकतर ज्योमितीय भांते बनाने की प्रथा थी, जैसे दोहरी या तिहरी धारियों के बीच-बीच में सकरपारे की पंक्ति।

कभी-कभी ढाका जामदानी की साड़ियों में सफेद जमीन में बूटियाँ सफेद परन्तु किनारा और कोनिया लाल या गहरे नीले (सुरमई) रग के सूत से बुने जाते (फलक ३)। भारत कला भवन में इस तरह की कुछ साड़ियाँ हैं। एक साड़ी (पंजिका संख्या १०।१४६७) में सफेद मलमल की जमीन में सफेद सूत से छोटी-बड़ी बूटियों का भराव है। दोनों ओर लाल सूत से

१—धारियों के बीच बूंदों की या सकरपारे की पंक्ति बुनकरों की भाषा में चूड़ी-कंगना कहलाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

११·५ से०मी० चौड़ा किनारा है तथा आंचल में चोकोर कोनियां बने हैं, जिनमें बीच में बड़ी और दोनों ओर छोटी कैंरियों के अलावा अन्य प्रकार के फूल-पत्तियों का घना संयोजन है। दोनों कोनिया के बीच की दूरी केवल ५ सेन्टीमीटर है।

एक अन्य साड़ी (पं० सं० १०/१२५३, फलक सं० ३) में सफेद महीन मलमल की जमीन में फूलदार गोल बूटियों का घना भराव तथा बीच-बीच में बूंदों का छिड़काव है। किनारा और कोनिया सुरमई रंग के सूत से बने हैं। किनारे की चौड़ाई १०.५ से० मी० है जो दो भागों में बंटी हुई है। आधे में बेल तथा शेष आधे में झालर बनी है। कोनिया में बीच में एक बड़े कलंगे के चारो ओर फूल पत्तियों का घना भराव है। आंचल भूमितीय भांतदार फीते से बंधा हुआ है।

जामदानी के चौकोरा या रूमालों का उपयोग थालपोश अथवा मेजपोश के रूप में किया जाता था। इनमे सफेद या मखनिया रंग की जमीन में दो ओर सफेद सूत से साड़ी के समान ही बेल और झालरदार किनारा रहता। शेष दोनों छोरों पर साड़ी के आँचल के समान धारियों के बीच ज्योमितीय आकृतियों से युक्त फीता रहता। बीच में बड़ा सा चांद (वृताकार अलकरण) तथा चारों कोनों में बड़े-बड़े कोनिया बनाये जाते (फलक ७)। मेज पर बिछाते समय प्रायः इनके नीचे पहले कोई रंगीन कपड़ा बिछा लिया जाता[1] जिससे भांते स्पष्ट उभर आयें। इस तरह के रूमाल और चौकोराओं की खपत विदेशों में भी पर्याप्त होती थी।

ढाका जामदानियों में कभी-कभी सफेद या रंगीन सूती कपड़े की जमीन में जरी के तारों से अलंकरण बनाया जाता था। ये 'जराओं जामदानो' या 'जरी जामदानी' कहलाती थी। प्रायः गहरे नीले या सुरमई रंग की जमीन में गंगा-जमुनी (सुनहली और रुपहली तारों से) बेल तथा बूटियां बनायी जाती थीं। इस प्रकार की साड़ियां 'नीलाम्बरी' कहलाती थीं।

नीलाम्बरी' साड़ी का एक सुन्दर नमूना भारत कला भवन के संग्रह में है[2]। इसमें गहरे नीले रंग की सूती जमीन में सुनहली तारों से आड़ी बेल बनी हैं। बेलों के बीच में गोलाकार बूटियों का भराव है और बीच-बीच में फर्दी बूटियों का घना छिड़काव है। दोनों ओर जरी का चौड़ा किनारा है जो दो भागों में बटा हुआ है। नीचे रुपहले तार से चूड़ी कगना से बंधी हुई बेल बनी है तथा ऊपरी हिस्से में सुनहरी तार से बनी चौड़ी झालर है। दोनों ओर के आंचल में बड़े बड़े गंगा-जमनी कोनियां बने हैं, जिनमें कलंगे, कैरी और फूल पत्तियों का संयोजन है (फलक ५, सं० ३)। सम्पूर्ण अलंकरण में हरसिंगार के फूलों की प्रधानता है। इस प्रकार की एक नीलाम्बरी साड़ी, कलकत्ते के इंडियन म्यूजियम में प्रदर्शित है। सन् १९०३ में दिल्ली में हुई प्रदर्शनी में इसी प्रकार की एक नीलाम्बरी प्रदर्शित हुई थी, जिसे पदक प्राप्त हुआ था[3]।

उक्त प्रकार की नीलाम्बरो साड़ियों के समान पारिजात के फूलों के संयोजन से बनी बेल-बूटियां सफेद सूती जामदानियों में भी मिलेंगी। परन्तु इनमें जमीन में आड़ी बेलों का भराव नहीं किया जाता था (फलक २)। वाट के विवरण से ज्ञात होता है कि ज़री-जामदानियों में

१—वाटसन, पृ० २८६

२—पं० सं० १०/१४४

३—वाट, इंडियन आर्ट एट देहली, पृ० २८५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अशर्फी बूटी का प्रयोग विशेष रूप से होता था[१]। कभी-कभी ज़री-जामदानियों में जरी के के तारों साथ अलंकरण में रंग-बिरंगे सूती तागों का भी प्रयोग किया जाता था[२]।

सूती ज़मीन में मूगा रेशम से जामदानी के काम की साड़ियां भी ढाका में बनायी जाती थीं इस प्रकार की जामदानियों को "अजिजुल्लाह" कहा जाता था[३]।

गहरे नीले रंग की सूती जमीन में रंग-बिरंगे सूती तागों से जामदानी भांत वाली साड़ियां भी नीलाम्बरी कहलाती थीं। इस प्रकार की साड़ियों में प्रायः चौड़ा किनारा रहता था जिसमें लाल और हरे रंग से बेल तथा कंगूरे की झालर बनायी जाती थी[४]।

सस्ते प्रकार की रंगीन जामदानी बंगाल में शांतिपुर तथा कुछ अन्य स्थानों पर भी बुनी जाती थीं[५]। इनका उपयोग जामा अंगरखा और दुपट्टों आदि के लिए किया जाता परन्तु इस तरह की जमदानियां चटकीले रंग तथा मोटी भांतो के कारण कलात्मक प्रकृति के लोगों की रुचि के प्रतिकूल थीं। यूरोपीय बाज़ारों में इनकी खपत पर्दे आदि के लिए होती थी।

ढाका जामदानियों में प्रचलित कुछ बूटे-बूटियों के नाम इस प्रकार हैं :

चाँदा बूटी : फूल पत्तियों के संयोजन से बनी गोलाकार बूटी होती थी।

तारावूटी :—इसमें पाँच पंखुड़ियों वाला या सात पंखुड़ियों वाला फूल बना रहता था।

तुरंजबूटी :—यह कलंगे के आकार की बूटी होती थी।

फर्दी बूटी :—छोटी-छोटी बूटियां होती थीं। इनका भराव प्रायः बड़ी बूटियों के बीच बीच में होता था। कभी-कभी पूरी जमीन में केवल फर्दी बूटी का घना भराव भी देखने को मिलता है।

पन्ना हजारा : महीन बूंदों का घना भराव होता था।

पान बूटी—पान के आकार में फूल पत्तियों का संयोजन रहता था।

बूटा तोरदार :—इस प्रकार के बूटों में बड़े-बड़े फूल बने रहते थे।

बूटी झरदार :—इसमें खिले हुए फूल की बूटियों का बिखराव होता था।

अशर्फी बूटी :—गोलाकार बूटी होती थी।

चमेली बूटी :—चमेली के फूलों का भराव रहता था।

गुलदाउदी बूटी : गुलदाउदी के फूलों का संयोजन होता था।

गेंदा बूटी :—गेंदा के फूल और पत्तियों का संयोजन रहता था।

उपर्युक्त प्रकार की बूटियों को आड़ी या तिरछी पत्तियों में बनाया जाता था। कभी-कभी बड़े बूटों के बीच-बीच में छोटी बूटियों और फर्दी बूटियों का भराव किया जाता था। बूटीदार 'जामदान के कुछ थानों में प्रारम्भ की कुछ बूटियां भिन्न प्रकार की तथा भद्दी हैं। इसके पीछे संभवतः कारीगरों की यह मान्यता रही होगी कि इससे कपड़े को नजर नहीं लगती और कपड़ा बिना किसी विघ्न के पूरा बुन जाता है।

१—वाट, पृ० २८५

२—वही, पृ० २८६

३—वही, पृ० २८८

४—भारत कला भवन में इस तरह की साड़ी का एक टुकड़ा है, सं० १०१६९८

५—वाट, पृ० २८७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बूटियों के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की बेल और जंगले भी ढाका जामदानियों में प्रचलित थे। तिरछे बल, घुमावदार, सीधी या लहरदार बेल बनायी जाती थीं। कभी-कभी समानान्तर न बनाकर विपरीत दिशा में बनायी जाती थीं और बीच-बीच में गोलाकार बूटियों का भराव रहता (फलक ४, सं० २)। बेलों के बीच की बूटियों में प्रायः उन्हीं फूल पत्तियों का संयोजन रहता है, जिसकी बेल में प्रमुखता होती है।

पूरी जमीन में फूल-पत्तियों का जाल 'फुलवर' कहलाता था। फूल-पत्तियों के अतिरिक्त कुछ जामदानियों में अंगूर की लता का जाल भी बना मिलता है। भारत कला भवन के संग्रह में एक जामदानी के थान (सं० १०।२४०) में सफेद महीन मलमल पर सफेद सूत से अंगूर की लता को आकर्षक ढंग से जाल के रूप में संजोया गया है। अंगूर की पत्तियों के बने जंगले में बीच-बीच में अंगूर के गुच्छे लटकते दिखलाये हैं (फलक ४, सं० १)।

टांडा

भारत में जामदानी उद्योग का दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र फैजाबाद जिले में टांडा था। टांडा के अतिरिक्त फैजाबाद के कुछ अन्य गाँवों में जामदानी बुनी जाती थी। यहाँ यह उद्योग कब और किसने प्रारम्भ किया यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता, परन्तु विद्वानों का अनुमान है कि अवध के गवर्नर संआदतअली खां (१७९८-१८१४) के समय में यहाँ यह उद्योग प्रारम्भ हुआ[1]। इनके अतिरिक्त रसूलपुर के मुहम्मद हयात खां का नाम भी टांडा में वस्त्र उद्योग के विकास से सम्बन्धित किया जाता है[2]। श्रीमती पुपुल जयकर का विश्वास है कि १६ वीं शती के प्रारम्भ में बनारस के कुछ जुलाहे टांडा में जाकर बस गये[3]।

टांडा में जामदानी उद्योग की स्थापना के सम्बन्ध में कोई निश्चित प्रमाण उपलब्ध न होते हुए भी, यह तो निश्चित है कि अवध के कलाप्रिय और शौकीन प्रकृति के शासकों से यहां इस उद्योग के विकास को पूर्ण सहयोग तथा संरक्षण प्राप्त हुआ। ढाका के समान यहाँ भी जामदानी उत्पादन पर सरकार का एकाधिकार था।

१९ वीं शती के अंत में एच० आर० नेविल ने "डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यू० पी०, आगरा एण्ड अवध अवध" में तथा सी० ए० सिलबेराड ने "ए मोनोग्राफ आन काटन फेब्रिक्स प्रोड्यूस्ड इन दि नार्थ वेस्टर्न प्रोविंसेज एंड अवध" में यहाँ के जामदानी उद्योग के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी दी है। सिलबेराड से ज्ञात होता है कि फैजाबाद में टांडा और आस पास के कुछ गाँवों में जामदानी बुनी जाती थी और १९ वीं शती के उत्तरार्ध में टांडा नगर की ३० प्रतिशत जनसख्या बुनाई उद्योग में लगी हुई थी[4]।

१—सिलबेराड, सी०ए०, एमोनोग्राफ आन काटन फेब्रिक्स, प्रोड्यूस्ड इन दि नार्थ वेस्टर्न प्रोविंसेज एण्ड अवध, इलाहाबाद, १८९८, पृ० ३२ तथा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ युनाइटेड प्रोविंसेज, सं० ४३, पृ० ४१

२—जयकर, पुपुल, काटन जामदानीज् आफ टांडा एण्ड बनारस, ललितकला सं०, ६, अक्टूबर १९५६, पृ० ४०

३—वही, पृ० २९

४—सिलबेराड, पृ० ३२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टांडा में जामदानी की बुनाई के सम्बन्ध में नेविल तथा सिलबेराड से जो जानकारी मिलती है[1] वह संक्षेप में इस प्रकार है :

तंजेब के समान महीन सफेद मलमल की ज़मीन में सफेद सूत से अलंकरण का काम किया जाता था। कर्घे पर ताना चढ़ाने के बाद जो डिजाइन बनानी होती थी उसका कागज पर बना हुआ नक्शा ताने के नीचे रख लिया जाता था। कभी-कभी कारीगर नक्शे का प्रयोग न करके अपने मन से भांते बना लेते थे। भांत बनाने का सूत छोटी-छोटी बांस की तिल्लियों में लपेटा हुआ रहता था। इन तिल्लियों की संख्या बेल या बूटियों के अनुसार कम या अधिक होती थी। घनी बूटियों की बुनाई के लिए अधिक तिल्लियां रहती थीं। प्रत्येक बार ढरकी से बाना बुनने के पूर्व इन तिल्लियों के नक्शे में बनी आकृतियों के अनुसार आवश्यक दूरी तक ताने में सूत बुन दिया जाता था। इसके लिए बांस के बने नोकदार सोइये से ताना उठाया जाता था। सभी तिल्लियों द्वारा सूत फंसाने के बाद हत्थे से उसे पास खिसका दिया जाता था और ढरकी दूसरी ओर फेंक कर बाना बुन दिया जाता था। इसी क्रम से पूरा कपड़ा बुन दिया जाता था।

एक कर्घे में एक समय में तीन या चार व्यक्ति काम करते थे, जिनमें एक बुनकर तथा उसको सहायता के लिए दो या तीन बच्चे रहते थे। १० गज लम्बे और १ गज चौड़े जामदानी के एक थान को बुनने में तीन-चार व्यक्तियों को लगभग एक से दो मास का समय लग जाता था। कारीगरी के अनुसार थान की कीमत निश्चित की जाती थी। डिजाइन और साधारण काम के अनुसार एक थान की कीमत ६ से १३ रुपये तक होती थी। हिन्दू और मुसलमान दोनों कारीगर समान रूप से इस उद्योग में लगे हुए थे। हिन्दू कारीगर 'कोरी' और 'कत्वा' कहलाते थे तथा मुसलमान 'जुलाहा' कहलाते थे।

यहाँ मुख्य रूप से टोपी, पगड़ी, अंगरखा, कुर्त्ता इत्यादि पहनावे के लिए जामदानी बुनी जाती थी। दुपट्टा और चौकोरा भी कभी-कभी बुने जाते थे। जामदानी की साड़ियां प्रायः यहाँ नहीं बुनी जाती थीं। अलंकरण तथा जमीन के कपड़े के स्तर के अनुसार टांडा में दस प्रकार की जामदानियां बुनी जाती थीं[2]। सर्वश्रेष्ठ प्रकार की जामदानी 'इश्कपेंच' कहलाती थी। 'जूही' तथा 'खड़ाबेल' जामदानियों में भी महीन काम होता था, अतः इनकी कीमत अधिक होती थी।

१८ वीं शती में यहाँ ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने व्यापारिक फर्म की स्थापना की जो सूती कपड़ों की बुनाई और छपाई के लिए प्रसिद्ध हुई[3]। १९ वीं शती के अंतिम चरण में पहुँचते-पहुँचते टांडा के जामदानी उद्योग में पतन के चिन्ह दिखलाई देने लगे। १८७४ में बुनकरों की संख्या घटकर ८७५ रह गयी[4]। १८९७ में केवल ६ परिवार टांडा में जामदानी बुनते थे, जिनमें से ३ परिवार कसाइयों के और ३ जुलाहों के थे[5]।

१—सिलबेराड, ३२ तथा नेविल, एच०आर०, दि डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यू०पी०, आगरा एंड अवध, पृ० ४१

२—डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यू० पी०, भाग ४३, पृ० ४१

३—सिलबेराड, पृ० ३२

४—जयकर, पुपुल, ललितकला ६, पृ० ४०

५—सिलबेराड, पृ० ३२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१८ वीं शती में अवध दरबार में तथा रईसों के बीच टांडा जामदानी की बड़ी मात्रा में खपत होती थी। अवध के नवाबों के पतन के बाद जामदानी उद्योग उचित संरक्षण के अभाव में समाप्त होने लगा। १९ वीं शती के अन्त में टांडा की बनी जामदानियों की खपत केवल अयोध्या नरेश के यहाँ होती थी एवं कुछ थान नेपाल भेजे जाते थे[1]।

आज टांडा में जामदानी उद्योग लगभग समाप्त हो चुका है, परन्तु अखिल भारतीय हथकर्घा संस्थान ने इस कला के पुनरुद्धार के लिए संतोषजनक प्रयास किया। इसने टांडा के कुछ परम्परागत कारीगरों को आश्रय देकर जामदानी के कुछ श्रेष्ठतम नमूने तैयार करवाये हैं[2]।

टांडा जामदानियों में महीन परन्तु गफ मलमल की सफेद जमीन में सफेद सूत से अलंकरण बनाया जाता है। बुनाई और अलंकरण सम्बन्धी भिन्नता एवं कुछ अन्य स्थानीय विशेषताओं के कारण टांडा की बनी जामदानियां अलग ही पहचानी जा सकती हैं।

टांडा की जामदानियों में बुनते समय पूरे अर्ज में बूटियों की संख्या के अनुसार सूत लपेटी हुई अनेक तिल्लियों का प्रयोग भांत बनाने के लिए किया जाता था। इस प्रकार यहाँ प्रत्येक बूटी या बेल के लिए अलग तिल्ली होती थी जिससे बिना सूत कटे ही कुशलता-पूर्वक पूरी भाँत बुन दी जाती थी।

टांडा जामदानियों में जमीन का कपड़ा ढाका की अपेक्षा गफ बना हुआ होता है। कभी-कभी तो अद्धी के समान गफ जमीन में जामदानी का काम किया हुआ मिलेगा। इसके अतिरिक्त यहाँ अलंकरण के लिए प्रयुक्त सूत ढाका की अपेक्षा महीन होता है। कहने का तात्पर्य यह कि ढाका में झीने और पारदर्शी मलमल की सफेद जमीन में मोटे सफेद सूत से अलंकरण बनाया जाता था। अतः आकृतियाँ जमीन से उभरी हुई प्रतीत होती हैं, जबकि टांडा जामदानियों में गफ जमीन में महीन सूत से अलंकरण बुने जाने के कारण उतना उभार नहीं रहता। यदि ये तह करके रखी हुई हों तो दूर से सादा अद्धी के कपड़े के समान प्रतीत होती हैं।

टांडा तथा ढाका की जामदानियों में एक प्रमुख अन्तर यह है कि ढाका जामदानियों के समान टांडा में अलंकरण के लिए रंगीन सूत या जरी का प्रयोग कभी नहीं किया जाता था। दोनों स्थानों के अलंकरण में भी भिन्नता है। टांडा जामदानी की भांतों में अपेक्षाकृत अधिक बारीकी होती है। बेल-बूटियों में फूल-पत्तियों के महीन काम के कारण उतना घना भराव नहीं आ पाता था (देखिए फलक ८)।

टांडा जामदानियों की बेल-बूटियों में ढाका की अपेक्षा कम लचक और घुमाव (गोलाई) है। अतः कहीं-कहीं तो वे ज्यामितीय आकृतियों के समान प्रतीत होती हैं। कुछ उदाहरणों में तो एक सीधी रेखा में कुछ पत्तियां बनाकर बेल का रूप दे दिया गया है (फलक ८, सं० १ तथा ३)।

१—सिलवेराड, पृ० ३३

२—टांडा का एक कारीगर रफीक अहमद हैंडलूम बोर्ड की बनारस शाखा में कुछ वर्ष रहा, इसके पश्चात उसकी मृत्यु हो गयी। उसका एक भाई टांडा में काम करता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टांडा की जामदानियों में निम्नलिखित भांते लोकप्रिय थीं :—

गुलदस्ता बूटी :—फूलदान सहित फूलों का गुच्छा बनाया जाता था।

अनन्नास बूटी :—अनन्नास के फल के आकार का अलंकरण होता था।

फर्दी बूटी :—महीन बूटी होती थी, जिसका पूरी जमीन में घना भराव रहता था।

शाही फर्दी बूटी :—इसमें महीन बूंदों का घना भराव होता था।

मसूर बूटी :—मसूर की दाल के समान महीन बूंदों का घना भराव होता था।

मक्खी बूटी :—मक्खी के आकार की छोटी बूटियाँ होती थीं।

चौफुलिया बूटी :—चार पंखुड़ियों वाला फूल बना रहता था।

जामेवार :—पूरी जमीन में फूलपत्तियों का जाल रहता था।

इश्क पेंच :—महीन पत्तियों की बेल का भराव रहता था।

खड़ी बेल :—बेड़े बल (कपड़े की लम्बाई में) फूल पत्तियों की बेल बनी रहती थी, जो कभी घुमावदार और कभी सीधी बनायी जाती थी।

आड़ी बेल :—तिरछी बेल होती थी।

बेलपत्रीदार :—बेल पत्र के समान तीन पत्तियों का अलंकरण रहता था।

जालदार :— फूल पत्तियों का जंगला तथा बीच में बूटियां बनी रहती थीं।

जाल गुलदस्ता—जाल के बीच में गुलदस्ता या फूलों का गुच्छा बना रहता था।

उपर्युक्त अलंकरण के अतिरिक्त टांडा की बनी कुछ जामदानियों में शाही प्रतीक 'ताज' का संयोजन बूटियों के रूप में हुआ है। लखनऊ संग्रहालय में सुरक्षित एक नमूने में फूलपत्तियों के जाल के बीच ताज बना है[१]। एक अन्य उदाहरण में गोलाकार बूटी में ताज तथा दोनों ओर मत्स्य-कन्याएं बनी हैं[२]।

जायस

रायबरेली जिले में स्थित जायस भी अवध के नवाबों के शासन काल में मलमल और जामदानी का महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया था। यहाँ जामदानी का काम टांडा के समान ही होता था। सफेद गफ मलमल की जमीन में टांडा के समान ही महीन सूत से अलंकरण बनाया जाता था।

पुरानी 'डिस्ट्रिक्ट रिपोर्ट' के अनुसार जायस में जामदानी उद्योग की स्थापना भीखा नामक एक महत्वाकांक्षी व्यक्ति ने की[१]। कई बार के प्रयासों के पश्चात वह मलमल में

१—पांडेय, मोहन चन्द्र, अवध जामदानी, संग्रहालय पुरातत्व पत्रिका, अंक १, चित्र १

२—वही, चित्र २

३—डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यू० पी० तथा सिलवेराड, पृ० ३३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फूल-पत्तियां तथा अक्षर बनाने में सफल हुआ। उसने अवध के नवाब असफुद्दौला को एक कुरता और पगड़ी भेंट की जिसमें उसने नवाब के यश तथा गुणों की प्रशंसा बुन करके लिखी थी। इससे प्रसन्न होकर नवाब ने भीखा को बहुत बड़ी मात्रा में भूमि तथा सम्पत्ति पुरस्कारस्वरूप दी। इसी प्रकार का एक कुरता तथा पगड़ी उसने हैदराबाद के निजाम सिकन्दरजहाँ को भी भेंट किया था[१]।

१९ वीं शती के अन्त में जब कि अवध साम्राज्य के साथ-साथ जामदानी उद्योग का भी पतन होता जा रहा था, उस समय जायस में जामदानी का एकमात्र कुशल कारीगर मदारबक्श बचा था। वह भीखा के वंश का बताया जाता है[२]। डिस्ट्रिक्ट रिपोर्ट के अनुसार उसका परिवार लगभग ८०० वर्ष पूर्व जायस में आकर बसा था।

मदारबक्श मुख्य रूप से रूमाल और चौकोरा बनाता था, जिसमें विविध प्रकार की भांतों के साथ-साथ अरबी और फारसी भाषा में अक्षर भी लिखता था। उसके बनाये जामदानी के अनेक उत्कृष्ठ नमूने १८८३-८४ की कलकत्ता प्रदर्शनी तथा १८८६ की कालोनियल प्रदर्शनी में रखे गये थे। उसे अनेक पदक और प्रमाणपत्र भी प्राप्त हुए। उस समय मदारबक्श के बनाये रूमालों की कीमत १०० रुपया तक होती थी। ५० रुपये कीमत के एक रूमाल को बुनने में उसे साढ़े तीन से चार मास तक लग जाते थे[३]। वह टोपी के लिए भी जामदानी बनाता था, जिसकी कीमत १० रुपये तक होती थी।

बर्डवुड ने जायस के बुनकरों की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि, यहाँ महीन मलमल तंजब बुनी जाती है तथा हर प्रकार की भांत यहाँ के कारीगर बुन सकते हैं। फूल-पत्तियों के अतिरिक्त वे कुरान और वेदों के मन्त्र भी बुनकर कपड़े पर लिख देते हैं[४]।

लखनऊ

विवरणों से ज्ञात है कि १९ वीं शती के पूर्वार्द्ध तक लखनऊ शहर में बड़ी मात्रा में मलमल और जामदानी बुनी जाती थी[५]। विलियम होय के अनुसार इस समय यहाँ हथकर्घा उद्योग बहुत विकसित अवस्था में था, परन्तु अंग्रेजों की व्यापारिक नीति के फलस्वरूप यह उद्योग समाप्त प्राय: हो गया। असंख्य जुलाहे बेरोजगार हो गये, कुछ लखनऊ छोड़कर अन्य स्थानों में जा बसे। केवल कुछ कारीगर बच रहे जो स्थानीय खपत के लिए २०वीं शती के प्रारम्भ तक थोड़ी बहुत मात्रा में जामदानी बुनते रहे।

१—सिलबेराड, पृ० ३३

२—वही

३—वही

४—बर्डवुड, पृ० २४८

५—होय, विलियम, ए मोनोग्राफ आन ट्रेड एण्ड मेनुफेक्चर्स इन नार्दन इंडिया, पृ० १२३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बनारस

बनारस में मदनपुरा जामदानी बुनने का प्रमुख केन्द्र था। विशेष-रूप से यहाँ ज़री जामदानी बुनी जाती थीं। परन्तु यहां की ज़री जामदानियां ढाका से भिन्न प्रकार की होती थीं। ढाका की ज़री जामदानियों के अलंकरण में ज़री के साथ सूत का प्रयोग नहीं किया जाता था, जबकि बनारस में सूत और ज़री से एक साथ अलंकरण बुना जाता था।

बनारस में बनने वाली जामदानी की वस्तुओं में साड़ी, ओढ़नी, दुपट्टे तथा जामा और चोगा के कपड़े प्रमुख हैं। साड़ी, ओढ़ना और दुपट्टों में झुमका बूटी (फलक ११) विशेषरूप से प्रचलित थी। इनमें सफेद मलमल की जमीन में एक पंक्ति की बूटियाँ सूती और दूसरी पंक्ति की जरी की रहतीं। सूत से बनी बुटियों की बुनाई 'दंपच' में रहती तथा ज़री की बूटियाँ 'उत्तू' में बनायी जाती थीं। किनारा, आंचल, कोनिया आदि भी ज़री से नसदार 'उत्तू' में बनाया जाता था।

जामा, अंगरखा और चोगा के लिए बुनी जानेवाली जामदानियों में पूरे में ज़री तथा सूती बूटियों के अतिरिक्त पीठ और मुड्ढों पर पान के आकार में अलंकरण एवं दामन में कोनिया ज़री से बनाया जाता था। आस्तीन और दामन आदि के किनारे की बेल भी ज़री से ही बनायी जाती थी।

भारत कला भवन में बनारस जामदानी के कुछ श्रेष्ठ नमूने संग्रहीत हैं। एक चौकोरा में कोरी सफेद सूती मलमल की ज़मीन में सुनहली तार डंडों द्वारा बंधी हुई आड़ी बेल बनी हैं। बेलों के बीच-बीच में सफेद सूत से दंपच में बूटों की पंक्ति है और बीच के रिक्त स्थानों में सतदानी बूटियों का भराव है। चारों और चौड़ा किनारा है, जिसमें पहले ज़री का चौड़ा खजूरी फीता और फिर चूड़ी-कंगना में मारवाड़ी भांत (अमेंठवा) बनी हुई है। बेल के ऊपर कैरी और मौलसरी की झालर है (फलक सं० ६)। चौकोरा के बीचो-बीच बेल और झालर से घिरा हुआ बड़ा सा चाँद है। बेल में फूल सफेद सूत से दंपच में बने हुए हैं (फलक १०)। कोनिया में चौदानी फूल की बेल तथा झालर से बनी कैरी एवं अन्य फूल पत्तियों का संयोजन आकर्षक ढंग से किया गया है।

एक अन्य चौकोरा में हल्के गुलाबी रंग की मलमली जमीन में गुलाबी सूत तथा सुनहली जरी से झुमका बूटियों का भराव है। सूती बूटियाँ 'दंपच' में और ज़री की 'उत्तू' में बुनी हुई हैं। किनारे में सुनहली जरी से चौड़ा नसदार फीता, बेल तथा मौलसरी की झालर बनी है। कोनिया में कैरी तथा फूल-पत्तियों का संयोजन है। बीच के वृत्ताकार अलंकरण (चांद) में जरी और सूत दोनों का उपयोग हुआ है।

लखनऊ राज्य संग्रहालय में भी बनारसी जरी जामदानी के कुछ अच्छे उदाहरण हैं। एक चौकोरा (संचय पंजिका संख्या ६०।३२४) में सफेद जमीन में रूपहली जरी से जालदार के फीते से चारखाने बने हुए हैं। चारखानों के बीच में सफेद सूत से झुमका बूटियों का भराव है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बनारस में बनी रेशमी जामदानी के भी कुछ अच्छे उदाहरण प्राप्त हुए हैं। रेशमी जामदानी मुख्य रूप से जामा, चोगा और कुरतों के लिए बनती थी। मदनपुरा से रेशमी जामदानी का एक कुरता प्राप्त हुआ है जो १६ वीं शती के उत्तरार्ध का बना है। इसमें रेशमी मलमल की जमीन में सफेद सूत से झुमका बूटी तथा आड़ी बेल का भराव है।

रेशमी-ज़री जामदानी का एक श्रेष्ठ उदाहरण भारत कला भवन के वसन-संग्रह में है। यह एक चोगा है, जिसमें मखनीया रंग की महीन रेशमी जमीन पर सुनहली जरी से सतदानी या गुलदाऊदी की आड़ी झाड़ियाँ दूर-दूर बनी है। झाड़ियों के बीच में रेशमी सूत से दंपच में तीन-पतिया बूटियों की तिहरी पंक्ति का भराव है (फलक १२ सं० १)। पीठ पर बड़े पान के आकार में सुनहली ज़री से फूल पत्तियों का अलंकरण बना है। उसी प्रकार का छोटा अलंकरण दोनों ओर की बाहों के मुड्ढे पर है। आगे के दामन में बीचो-बीच सरों के आकार का अलंकरण है और कोने में कैरी के कोनिया बने हैं। किनारों पर लहरदार बेल बनी हैं। इसमें केवल तीनपतिया बूटियों को छोड़कर समस्त अलंकरण जरी से नसदार उत्तू की बुनाई में है।

बनारस जामदानी के संदर्भ में यह बताना प्रसंगोचित होगा कि बनारस के महाराजा प्रभुनारायण सिंह जी को जामदानी ढंग की बुनाई विशेष रूप से पसन्द थी। उनके आदेश पर जामदानी की नकल पर एक ऊनी कपड़ा काश्मीर से बनवा कर मंगाया गया, जिसमें हल्के फिरोजी रंग के पश्मीने की जमीन पर लाल सूत से ढाकाई जामदानी के समान बूटियों का भराव था। महाराजा ने इस कपड़े में से अपनी एक पोशाक बनवायी। उसी पोशाक की कतरन में से बचे एक दो टुकड़े भारत कला भवन के वसन-संग्रह में सुरक्षित हैं।

'ढाकाई' नाम से सस्ती साड़ियाँ बनारस में आज तक बनती हैं। इनमें रंगीन जमीन पर रंग-विरंगी सूत से दंपच में प्रायः किनारा और आंचल बना रहता है। जकार्ड के प्रचलन के पूर्व जब ये कढ़ियल बनती रही होंगी तो निश्चय ही सुन्दर लगी होंगी परन्तु अब अलंकरण कतरउवां होने के कारण न तो ये उतनी सुन्दर लगती हैं और न टिकाऊ ही होती हैं।

अन्य केन्द्र

ढाका तथा अवध जामदानियों से भिन्न एक तीसरे प्रकार की जामदानियाँ भी देखने को मिली हैं, जिनके निर्माण केन्द्र के सम्बन्ध में निश्चय पूर्वक कुछ भी नहीं कहा जा सकता[१]। इनमें सफेद मलमल की जमीन में मोटे सफेद सूत से बेल-बूटियों का काम रहता है। दूर से देखने पर ये ढाका जामदानी के समान प्रतीत होती हैं, परन्तु ध्यान से देखने पर अन्तर स्पष्ट हो जाता है। इसमें भांते लखनऊ चिकन के 'शेडोवर्क' के समान बुनकर बनायी हैं, अर्थात् आकृतियों की बाहरी रेखा में सूत फंसाया है, बीच में बिना बुने छोड़ दिया है (फलक १२, सं० ३)। इस प्रकार जामदानी की साड़ी और अंगरखे पाये गये हैं। साड़ियों में काले और

१--पुपुल जयकर का मत है कि इस प्रकार का काम टांडा में होता था। यह मत सही प्रतीत नहीं होता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाल से दुरंगा कैरी का किनारा है और हौद में आड़ी बेल तथा जाल आदि बने हैं। संभवतः इस प्रकार का काम कोटा अथवा ग्वालियर में होता था।

नेपाल में जामदानी की नकल पर खाष्टों नामक वस्त्र अब तक बुना जाता है, जिसका उपयोफ चादर और शाल के रूप में होता है। इनमें सफेद जमीन में लाल, पीले, हरे आदि सूत से जामदानी के समान दंपच में बेल-बूटे बनाये जाते हैं। इस प्रकार के कपड़े का उपयोग टोपी के लिए भी किया जाता है। सम्भवतः इसी प्रकार की रंगीन जामदानियों का प्रभाव लाने के लिए बाद में छपे हुए मोटे कपड़े के दोनों ओर महीन मलमल का आवरण चढ़ा कर शालें तैयार की जानें लगी जो खाष्टों के नाम से ही जानी जाती है।

१—दक्षिण के कुछ केन्द्रों में जामदानी भाँति के वस्त्र बुने जाते थे। देखिए. वाटसन, कलेक्शन आफ स्पेसिमेंन्स आफ दि टेक्सटाइल मैनुफैक्चर आफ इण्डिया, सेकेंड सीरीज़, सं० ८६१ तथा ८६२ (बम्बई के टाउन हाल पुस्तकालय में सुरक्षित)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परिशिष्ट

विद्यार्थियों की सुविधा के लिए मुगल युग की कुछ प्रमुख वस्त्र-सूचियाँ नीचे दी जा रही हैं जिनका उल्लेख इस पुस्तक में अनेक स्थलों पर हुआ है।

जायसी कृत पदमावत में निम्नलिखित वस्त्रों की सूची दी है[1]

पटुवन्ह चीर आनि सब छोरे। सारी कंचुकी लहरि पटोरे।
फुंदिया और कसनिया राती। छाएल पंडुआए गुजराती।
चंदनौटा खीरोदक फारी। बांसपोर झिलमिल की सारीं।
चिकवा चीर मेघौना लोने। मोति लाग औ छापे सोने।
सुरंग चीर भल सिंघल दीपो। कीन्ह छाप जो धन्नि वे छीपी।
पेमचा डोरिया औ बीदरी। स्याम सेत पियरी औ हरी।
सातहुँ रंग जो चित्र चितेरी। भरि कै डीठि जाहि नही हेरी॥

आइने अकबरी में उल्लिखित सूती वस्त्रों की सूची :—[2]

खास, चौतार, मलमल, तनसुख, सिरिसाफ, गंगाजल, भिरौन, सहन, झोना, अटान, असावली, बाफ्ता, महमूदी, पंचतोलिया, झोला, साल, डोरिया, बहादुरशाही, गर्बा सूती, शेला दक्षिणी, मिहिरकुल, मिन्दिल, सरबन्द, दुपट्टा, कतांचा, फीता, गोशपेच, छींट, गजीना, सिलाहटी।

चकत्तावंश प्रकाश में उल्लिखित वस्त्रों की सूचो :—[3]

'अथ वस्त्र की जात ॥ ० ॥ सरबंद ॥ १ ॥ तनसुष ॥ २ ॥ तनजेब ॥ ३ ॥ तरंदाम ॥ ४ ॥ आगबानी ॥ ५ ॥ सबनम ॥ ६ ॥ संजरषानी ॥ ७ ॥ दुदामी ॥ ८ ॥ दौरिया ॥ ९ ॥ चारषाना ॥ १० ॥ फूलकारी ॥ ११ ॥ षासा ॥ १२ ॥ मलमल ॥ १३ ॥ श्री साफ ॥ १४ ॥ कपूरधूल ॥ १५ ॥ वाफदा ॥ १६ ॥ भडोची ॥ १७ ॥ महमूदी ॥ १८ ॥ पंचतोलिया ॥ १९ ॥ सेला ॥ २० ॥ गांजिया ॥ २१ ॥ झिलमिल ॥ २२ ॥ गुलबदन ॥ २३ ॥ बुलबुलचस्म ॥ २४ ॥ मुसज्जर ॥ २५ ॥ अतलस ॥ २६ ॥ ताफ्ता ॥ २७ ॥ दरियाई ॥ २८ ॥ कसब ॥ २९ ॥ इलायचा ॥ ३० ॥ सदंली ॥ ३१ ॥ हमरू ॥ ३२ ॥ कीमषाब ॥ ३३ ॥ जरवफ्त ॥ ३४ ॥ ताडपत्री ॥ ३५ ॥ लुंगी ॥ ३६ ॥ भिसरू ॥ ३७ ॥ औरंगजेबी ॥ ३८ ॥ अंबर ॥ ३९ ॥ सूची ॥ ४० ॥ नादरसाही ॥ ४१ ॥ आडा ॥ ४२ ॥ षैरावादी ॥ ४३ ॥ सिपी ॥ ४४ ॥ सोरंसकर ॥ ४५ ॥ कलंदरा ॥ ४५ ॥ छींट ॥ ४७ ॥ सालू ॥ ४८ ॥'

१—पदमावत, पदमावती रत्नसेन भेंट खंड

२—आइने अकबरी, आईन ३२, ब्लाकमेन, पृ० ९४

३—चकत्तावंश प्रकाश (हस्तलिखित ग्रंथ) ४३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूदन कवि रचित 'सुजान चरित' में उल्लिखित वस्त्रों की सूची :-[१]

रूमाल दुसाला पट्टू आला चूनी जाला सोभ बनी,
मखमल बन्नाते अरु सकलातें भाँतितु भातैं छींट घनी।
बहुरंग पटंवर पसमी कंवर धवल सुअंवर कौन गनै,
जरदोज मुकेसी दाना केसी मसरू वेसी लेत बनै।।
बादला दरयाई नौरंग साई जरकस काई झिलमिल है,
ताफता कलंदर वाफतबन्दर मुसजर सुन्दर गिलमिल है।
श्री सकर विलंदी दूरिधरन्दी मानिकचन्दी चौखाने,
किमखाब सुसालू खादी खालू चोलैं चालू जग जाने।।

राजस्थान प्राच्य विद्या-प्रतिष्ठान के संग्रह में सुरक्षित एक राजस्थानी हस्तलिखित ग्रथ (१८ वीं शती का अन्तिम चरण) में निम्नलिखित "भलावस्त्र" की सूची दी है[२]—

सालू, सेला, सरिसाप, धुसा, सलहती, सूपासो, चोरसो, चीर, चुनडी, चोणी, सीन्दूरी, छींट मूलतानो, मलमल, मखमल, महमूदी, पाघड़ी, पटका, पछेडी, पटोली, पचवटू, पटू, अटाण, अँतलस, अधोतर, इलायचा, खासाखोरी, भयरव, बाहादरी, बदामी, दरियाई, दोताला।

राजस्थान के संवत्, १८०५ से १८४५ तक के प्राचीन कागजों पर आधारित एक वस्त्र-सूची[३]—

तनसुख, तंजेब, तरंदम, सवनम, संजरखानी, आगबानी, दोदामी, डोरिया, रेजी, चारखाना, चादर, खसाले, फुलकारी, सिरसाफ, खासा, कपूर-धूल, मलमल, बाफ्ता, पचतोलिया, सेली, सिंदली, गजिया, झिलमिल, गुलबदन, बुलबुल चश्म, चक्रम, मुसन्ना, अतलस, ताफ्ता, दोराई, कसब, इलायचा, हमरूह, कमखबाब, जरवफात, ताड़पत्री, लौंगी, मिसरू, महमूदी, बाबरी, अकबरी, औरंगजेबी, नादिरशाही, खैराबादी, सौंसी, आड़ा, सीपो, खीरक्कर, कलिन्दरा, स्वांलूडा।

गुजरात के प्रसिद्ध कवि प्रेमानन्द (संभवतः १८ वीं शती) रचित काव्य "कुंवर बाईतुं मामेरू" में वस्त्रों की विविधता[४]—

पांच वस्त्रना पंचविश वाघा, चीर चोकढ़ी तास, बहुजी।
लखो पछेडो पंदर कोडी, पटोलां पचास, बहुजी।

१—सुजान चरित, पृ० १५९

२. पाठक पद्मधर, मध्य युगीन कुछ वस्त्रों और आभूषणों की चर्चा, सरस्वती, अक्टूबर १९६४, पृ० ३४३

३. शर्मा, हनुमान, राजपूताने की कला, सरस्वती, अंक २६, भाग २, पृ० १९२५

४—देसाई, इच्छाराम, सूर्यराम (सम्पादक), बृहत् काव्य दोहन, भाग १, बम्बई, १९२५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साठेक मुगटा ने सो एक मणियां, चीर लखो चालीस।
बेकोडी जरकशी नी साडी, रेशमी कोडी बार।
सादी साड़ियों लखों त्रणसें, छायल लखो सेंचार।
घर साड़ी लखो दशत्रिस कोडी, सोड़ कोडी लखो घाट।
छींट मोरवी टुकडी सोएक, नव कोडी लखो नाट।
मशरु गजियाणि दरियाई, लखों थान पचास।
हजार बारसें लखो कापडां, लोक करे बहु आश।
सोलसें लखो शेला सालू, तेल पान नो शो आंक।

सारू खीरोदक खांधे मूकी, डोसी ने समजाव्याजी[1]।

कभाय कोने पामरी पटका, नाम न जाय गणियां जी।
कोने मुगटा कोने पिताम्बर, कोने शेला पटु शाल जी।
गुच्छपेच पाघड़ियो तोरा, दीसे झाल झमाल जी।
पायजामा नीमा पछेड़ी, जामा अवला बंधजी।
वस्त्र तणो तो वरसाद वरस्यो, ज्यां दोशीं करुणा सिंधजी।
गंगा वहु ने गजीयांणी साड़ी, सुन्दर वहुने सालुजी।
छबीली बहुने छायल भारे, भात्य ते रातो घोली जी।
कोड वहु ने कलगेर आपी, प्रेम वहु ने पटोली जी।
राम कुंवर ने कृष्ण कुंवर ने, आप्या उत्तम घाट जी।
छेल वहु ने छींटज आपी, नहानी वहु ने नाट जी।
पांन वहु तो पीताम्बर पहरे, ताके बच्ची बाई जी।
रूप कुंवर ने रातो सालु, देव कुंवर दरियाई जी।
श्याम कुंवर सोनेरी सालु, गुण कुंवर घरचोलुं जी।
लक्ष्मी वहु ने, लाछा वहु ने, लाल वहु ने पटोलुं जी।

मशरू गजियां ने गजियांणीं, गज भरी नें कापे जी[2]।
पाट पीताम्बरं अतलस अंबर, चोले रंगे चीर जी।
शोभे सुन्दर भात्य नवरंगी, पुतलीओ ने कोर जी।
साड़ी जरकशीनी ओढ़णी, चडके सुन्दर जोर जी।
केशर छांट्या घोला सालु, फरती कसबी कोर जी।
चन्द्रकला ने मोरवी शोभे, दरियाई मां दोर जी।
अतलस पांच पटा आभूषण, सोना रूपानो महोर जी।

१—वही, पृ० २३५
२—वही, पृ० २३७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उक्त वस्त्र-सूचियों में से अनेक वस्त्र २०वीं शती के प्रारम्भ तक प्रचिलित रहे, जिसका प्रमाण स्व० जगन्नाथदास रत्नाकर की रचना 'कल-काशी' के निम्नलिखित अंश से मिलता है—

बिविध बसन बहुमोल लोल लोचनहिं छकित कर।
झीन पीन रंगीन स्वेत सादे फुलवर बर॥
पाट टसर सन सूत ऊन सों बिरचित नीके।
चारु सचिक्कन पोत मनहुँ गाभा कदली के॥
साँतिपुर मदरास नागपुर की कल धोती।
द्रविण पाटमय पाढ़ निपुनता की जनु सोती॥
ढाके की मलमल सुडोरिया राधानगरी।
विष्णुपुर मुरसिदाबाद पाटंबर पगरी॥
आजमगढ़ के चमचमात गलता अरू संगी।
काशी के बहुमूल्य बसन बहुबिध बहुरंगी॥
अतलस चिनियापोत बासकट तास ताफ़ता।
अमरू मसरू धूप छाँह कमखाब बाफ़ता॥
सुघर जामदानी बर टाँड़े की टिकसारी।
चिकन लखनऊ रचित बेल अरु बूटनवारी॥
चारू चँदेली की चादर मंदलि मनोहर।
जैपुर सांगानोर चीर छापे अति सुन्दर॥
ललित लायचा दरियाई च्योली पंजाबी।
तिब्बत के संबूर छाल रूसी संजाबी॥
साल दुसाले कलित कृपारामी कस्मीरी।
जिनके नेरे जात सीत नहिं सिसिर समीरी॥
चिलकी चिक्कन चारू चीर चीनी जापानी।
पाट पीठि वारी मखमल कोमल कासानी॥
भोटी गुदमे गहब नवल नमदे मुलतानी।
वगदादी कम्बल बनात सुन्दर सुलतानी॥

★

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित्र सूची

फलक १—ढाका में मलमल तैयार करने की विभिन्न क्रियायें[1] ।

फलक २—जामदानी की साड़ी, ढाका, संभवतः १९ वीं शती का पूर्वार्धं ।

फलक ३—जामदानी की साड़ी, ढाका, संभवतः १९ वीं शती का पूर्वार्ध ।

फलक ४—जामदानी के विविध नमूने, १९ वी शती के प्रारम्भ से १९ शती के अन्त तक ।

फलक ५—चित्र १, २, तथा ४ जामदानी के विविध नमूने, ढाका १९ वीं शती का पूर्वार्धं ।

चित्र–३–नीलाम्बरी साड़ी, जरी जामदानी, ढाका, संभवतः १९ वीं शती का पूर्वार्धं ।

फलक ६—जामदानी, सफेद जमीन में नीली बूटी, ढ़ाका, १९ वीं शती का अंत ।

फलक ७—जामदानी का छोटा चौकोरा, संभवतः मेजपोश, ढाका, संभवतः १९ वीं शती का उत्तरार्धं ।

फलक ८—जामदानी के विविध नमूने, टाँडा, संभवतः १९ वीं शती का प्रारम्भ ।

फलक ९—जरी जामदानी के चौकोरा का कोना, बनारस, संभवतः १९ वीं शती का प्रारम्भ ।

फलक १०—उक्त चौकोरा का मध्य भाग ।

फलक ११—जरी जामदानी का चौकोरा या ओढ़नी, बनारस, संभवत १९ वीं शती का पूर्वार्धं ।

फलक १२—चित्र १—जरी जामदानी, रेशमी जमीन, बनारस, संभवतः १९ वीं शती का पूर्वार्धं ।

चित्र २—जरी जामदानी का दुपट्टा, बनारस, संभवतः १९ वीं शती का उत्तरार्धं ।

चित्र ३—जामदानी का नमूना, संभवतः कोटा अथवा ग्वालियर, १९ वीं शती का उत्तरार्ध ।

१—यह चित्र वाटसन की पुस्तक "दि टेक्सटाइल मेन्युफैक्चर्स एंड कास्ट्युम्स आफ दि पीपुल आफ इंडिया" से लिया गया है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुस्तक-सूची

अग्रवाल वासुदेव शरण (सम्पादक) —पद्मावत, झांसी, १९५५

—हर्षचरित: एक सांस्कृतिक अध्ययन, १९५३

—रिफरेंसेज टू टेक्सटाइल्स इन वाणस हर्षचरित, जर्नल आफ इंडियन टेक्सटाइल हिस्टरी, भाग ४, १९५९

—पाणिनि कालीन भारतवर्ष, बनारस १९६९

अमर सिंह —अमर कोश, सम्पादक-कृष्णजी गोविन्द ओक, पूना १९१३

अमेरिकन फैब्रिक मैगजीन (प्रकाशक) —इनसायक्लोपीडिया आफ टेक्सटाइल्स, १९६०

अहिवासी, ज० मु० (सं०) —कीर्तन संग्रह, नारायण तथा जेठानन्द आसनमल पुष्टीमार्गीय ग्रंथमाला ८, भाग १, २ बम्बई, सं० २०११,

इर्विन, जान —इण्डियन टेक्सटाइल ट्रेड इन दि सेवेन्टीन्थ सेंचुरी : बेंगाल, जर्नल आफ इण्डियन टेक्सटाइल हिस्टरी, भाग ३, १९५७

—इण्डियन टेक्सटाइल्स ट्रेड इन दि सेवेन्टीन्थ सेंचुरी, वेस्टर्न इण्डिया, जर्नल आफ इण्डियन टेक्सटाइल हिस्टरी

एशटन, लुई (सम्पादक) —दि आर्ट आफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, लन्दन, १९४७-१९४८

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द्र —सुलेमान सौदागर, बनारस, १९२१

उपाध्याय, भागवत शरण —कालिदास का भारत, भाग १, बनारस, १९५४

कृष्णाचार्य, टी० आर० (सम्पादक) —महाभारत, बम्बई, १९०६

गांधी, एम०पी० —दि इण्डियन काटन टेक्सटाइल इण्डस्ट्री, कलकत्ता, १९१०

गौड़, रामदास (अनुवादक) —हाथ की कताई-बुनाई (पुस्तक के आगे के पृष्ठ खंडित होने से मूल लेखक का नाम अज्ञात), बनारस, संवत् १९८३

गुप्त, किशोरी लाल (सम्पादक) —नागरीदास ग्रंथावली, ना० प्र० सभा, बनारस

चटर्जी, सुनिति कुमार तथा मिश्रा, बबुआ (सम्पादक) —वर्णरत्नाकर

जयकर, पुपुल —काटन जामदानीज् आफ टांडा एण्ड बनारस, ललित कला सं० ६, १९५९

जैन, जगदीश चन्द्र —लाइफ इन एनशेंट इण्डिया, बम्बई, १९४७

त्रिपाठी, रामनरेश —काव्य-कौमुदी, भाग ५, प्रयाग, संवत् १९८६

दासगुप्ता, जी०एन० —बेंगाल इन दि सिक्सटींथ सेंचुरी

देसाई, इच्छा राम सूर्य राम (सम्पादक)—वृहत काव्यदोहन, भाग १, बम्बई, १९२१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नेविल, एच० आर० —दि डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यू०पी०, आगरा, एण्ड अवध, भाग ४३

परमार, श्याम —प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, बड़ौदा, १९२०

पाण्डेय, मोहन चन्द्र —अवध जामदानी, संग्रहालय पुरातत्त्व पत्रिका, अंक १, लखनऊ १९६८

पाठक, पद्मधर —मध्ययुगीन कुछ वस्त्रों और आभूषणों की चर्चा, सरस्वती, अक्टूबर १९६४

फोस्टर, डब्लू० (सम्पादक) —लेटर्स रिसीव्ड बाय ईस्ट इण्डिया कम्पनी फ्राम इट्स सर्वेन्ट्स इन दि ईस्ट, भाग १ से ६, लंदन, १८९६-१९०२

—अर्ली ट्रेवेल्स इन इण्डिया, लंदन, १९२१

—इंगलिश फेक्टरीज़ इन इण्डिया १६१८-२१, आक्सफोर्ड, १९१५

फिलिप्स, जार्ज —महुआन्स एकाउण्ट आफ दि किंगडम आफ बेंगाल, जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी, १८९५

बर्डवुड, जार्ज सी० एम० —दि इण्डस्ट्रियल आर्ट्स आफ इण्डिया, १८८०

बनर्जी, एन० एन० —कॉटन फैब्रिक्स आफ बेंगाल, जर्नल आफ इण्डियन आर्ट, भाग ८ सं० ६८, १८९९

बर्नियर —ट्रेवेल्स इन दि मोगल एम्पायर १६५६-१६६७, अनुवादक—आर्चिवाल्ड कान्सटेबल, द्वितीय संस्करण, १९१४

बाजपेयी, कृष्णदत्त —भारतीय व्यापार का इतिहास, मथुरा, १९५१

ब्लाकमेन (अनुवादक) —आइने अकबरी

बिरेल, एल० —टेक्सटाइल आर्ट्स, १९५८

भिक्षु धर्म रक्षित (अनुवादक) —महापरिनिब्बान सुत्त, बनारस

मनुची, निकोलाओ —स्टोरिया डो मंगोर, भाग १, २, अनुवादक विलियम इर्विन, लंदन, १९०७

मार्शल, जान —मोहन जोदाड़ो एण्ड इंडस वेली सिविलाइजेशन, भाग १, लंदन, १९३१

मिर्जा, वहीद —लाइफ एण्ड वर्क्स आफ अमीर खुसरो

मुखर्जी, अजीत —हिस्टोरिकल टेक्सटाइल्स आफ बेंगाल, मार्ग, भाग ३, सं० १

मुखर्जी, टी० एन० —हैंडबुक आफ इण्डियन प्रोडक्ट्स, कलकत्ता, १८८३

—आर्ट मैन्युफैक्चर्स आफ इण्डिया, कलकत्ता, १८८८

मोतीचन्द्र —प्राचीन भारतीय वेश-भूषा, प्रयाग, १९५०

—काशी का इतिहास, बम्बई, १९६२

—इण्डियन कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स फ्राम एट्थ टू दि ट्वेल्फ्थ सेंचुरी जर्नल आफ इण्डियन टेक्सटाइल हिस्टरी, भाग५, १९६०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

—इण्डियन कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्स्टाइल्स इन दि सल्तनत पीरियड, जर्नल आफ इण्डियन टेक्स्टाइल हिस्टरी, भाग ६, १९६१

रत्नाकर, जगन्नाथदास (सम्पादक) —बिहारी सतसई

—कलकाशी (रत्नाकर जी की एक रचना)

—सुधासर, प्रथम भाग, बनारस, १९४४

राय, जोगेशचन्द्र —टेक्स्टाइल इण्डस्ट्री इन एनशियेंट इण्डिया, जर्नल आफ बिहार एण्ड ओरीसा रिसर्च सोसायटी, भाग ३, खण्ड २, १९१७

वर्मिंगटन, —कामर्स बिटविन दि रोमन एम्पायर एण्ड इण्डिया

वसु० बी० डी०, —दि रुइन आफ इण्डियन ट्रेड एण्ड इन्डस्ट्रीज, तृतीय संस्करण, कलकत्ता, १९३५

वाट, जार्ज —कार्मशियल प्रोडक्ट्स आफ इण्डिया, लंदन, १९०८

—इण्डियन आर्ट एट देहली : दि आफिशियल केटलाग आफ दि देहली एक्जीबिशन, १९०२–१९०३, कलकत्ता, १९०३

—डिक्शनरी आफ दि इकनोमिक प्रोडक्ट्स आफ इण्डिया, भाग १ लंदन, १८८९

वाटसन, फार्ब्ज् —दि टेक्स्टाइल मेनुफेक्चर्स एण्ड कास्ट्यूम्स आफ दि पीपुल आफ इण्डिया, लंदन, १८६६

—कलेक्शन आफ स्पेसिमेन्स आफ टेक्स्टाइल मेनुफेक्चर्स आफ इण्डिया, सेकेण्ड सीरी, लंदन, १८७३

—इलस्ट्रेशन्स आफ टेक्स्टाइल मेनुफेक्चर्स आफ इण्डिया, लंदन, १८८१

विद्यालंकार, कुमुद तथा झा, जयवंशी (सम्पादक) —विद्यापति पदावली,

विलियम्स, मोनियर —ए संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, आक्सफोर्ड १८९९

राधा कृष्णदास (सम्पादक) —सुजान चरित (सूदन कवि-कृत), बनारस, १९०२

शर्मा, हनुमान —राजपूताने की कला, सरस्वती, भाग २६, अंक २, संख्या ३, १९२५

शर्मा, हरिवंश राय (अनुवादक) —आईने अकबरी (हिन्दी अनुवाद), इलाहाबाद, १९६६

शास्त्री, गणपति (सम्पादक) —दि अर्थशास्त्र आफ कौटिल्य, त्रिवेंद्रम १९२५

शाफ, बिलफ्रेड एच (अनुवादक) —पेरिप्लस आफ दि एरिथ्रियन सी, १९१२

सांडेसरा, भोगीलाल जे० —प्राचीन फागू संग्रह, बड़ौदा, १९५५

—वर्णक समुच्चय, बड़ौदा, १९५६

स्टाइन, ओरेल —एन्शियेंट खोतान, भाग १, आक्सफोर्ड, १९०७

सिलवेराड, सी० ए० —ए मोनोग्राफ आन काटन फेब्रिक्स प्रोडयुस्ड इन दि नार्थ वेस्टर्न प्रोविंसेज एण्ड अवध, इलाहाबाद, १८९८

—काटन फेब्रिक्स आफ दि नार्थ वेस्टर्न प्रोविंसेज एण्ड अवध, जर्नल आफ इंडियन आर्ट, अंक १०, सं० ८२, १८९९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्मिथ, ए० डी० हावेल —दि डाइड एण्ड प्रिंटेड काटन्स आफ इंडिया, इंडियन आर्ट एण्ड लेटर्स, भाग १४, सं० २

सोमेश्वर देव —अभिलषितार्थ चिंतामणि, सम्पादक-शामा शास्त्री, भाग १, मैसूर, १६२६.

होय, विलियम —ए मोनोग्राफ आन ट्रेड एण्ड मेनुफेक्चर्स इन नार्दन इंडिया, लखनऊ, १८८०

विविध—

—इंडियन हिस्टोरिकल क्वाटरली, भाग १२, १६२६

चकत्तावंश प्रकाश—सवाई माधो सिंह के काल (१८ वीं शती) का लिखा व्रजभाषा का हस्तलिखित ग्रंथ, भारत कला भवन, बनारस के साहित्य विभाग के संग्रह में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—१

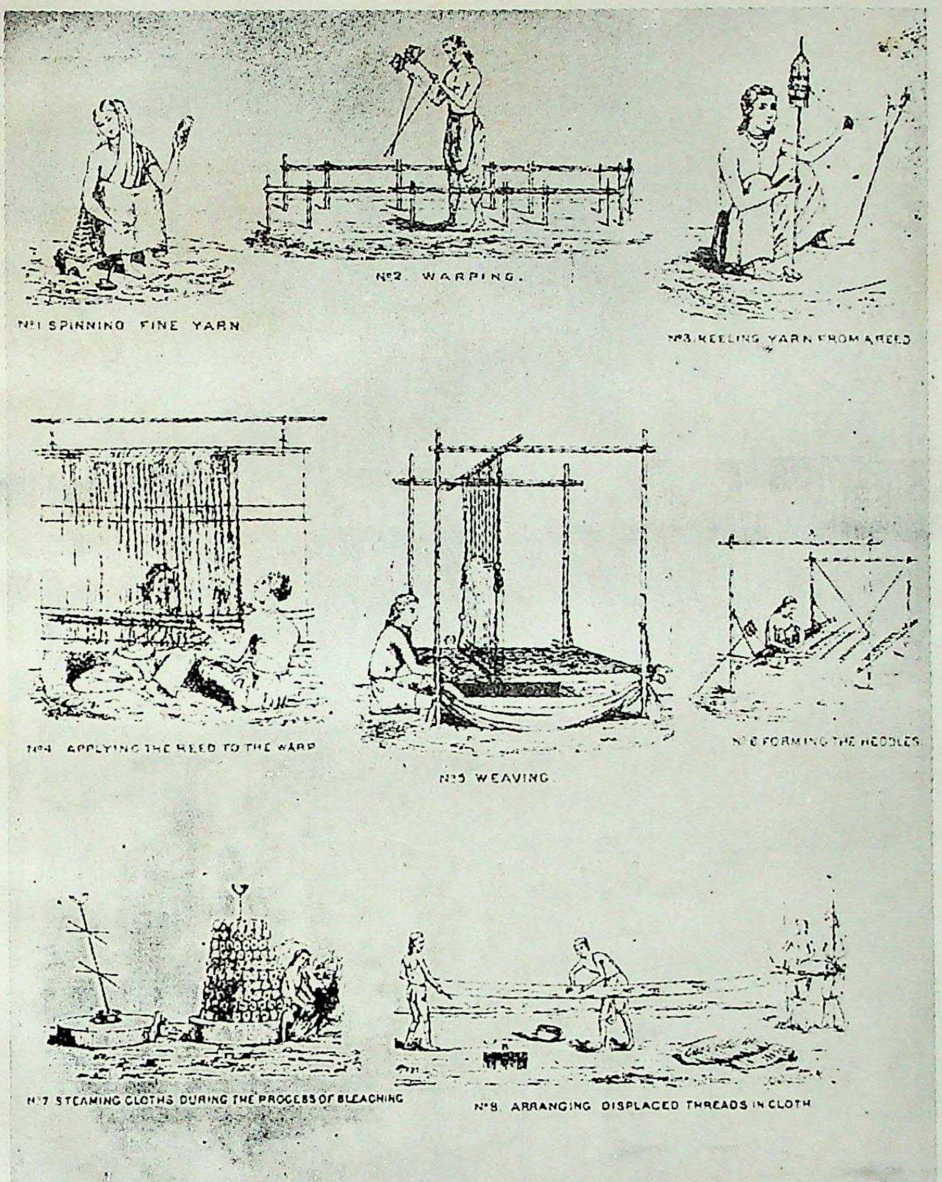

PROCESSES IN THE MANUFACTURE OF DACCA MUSLINS.

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

फलक — २

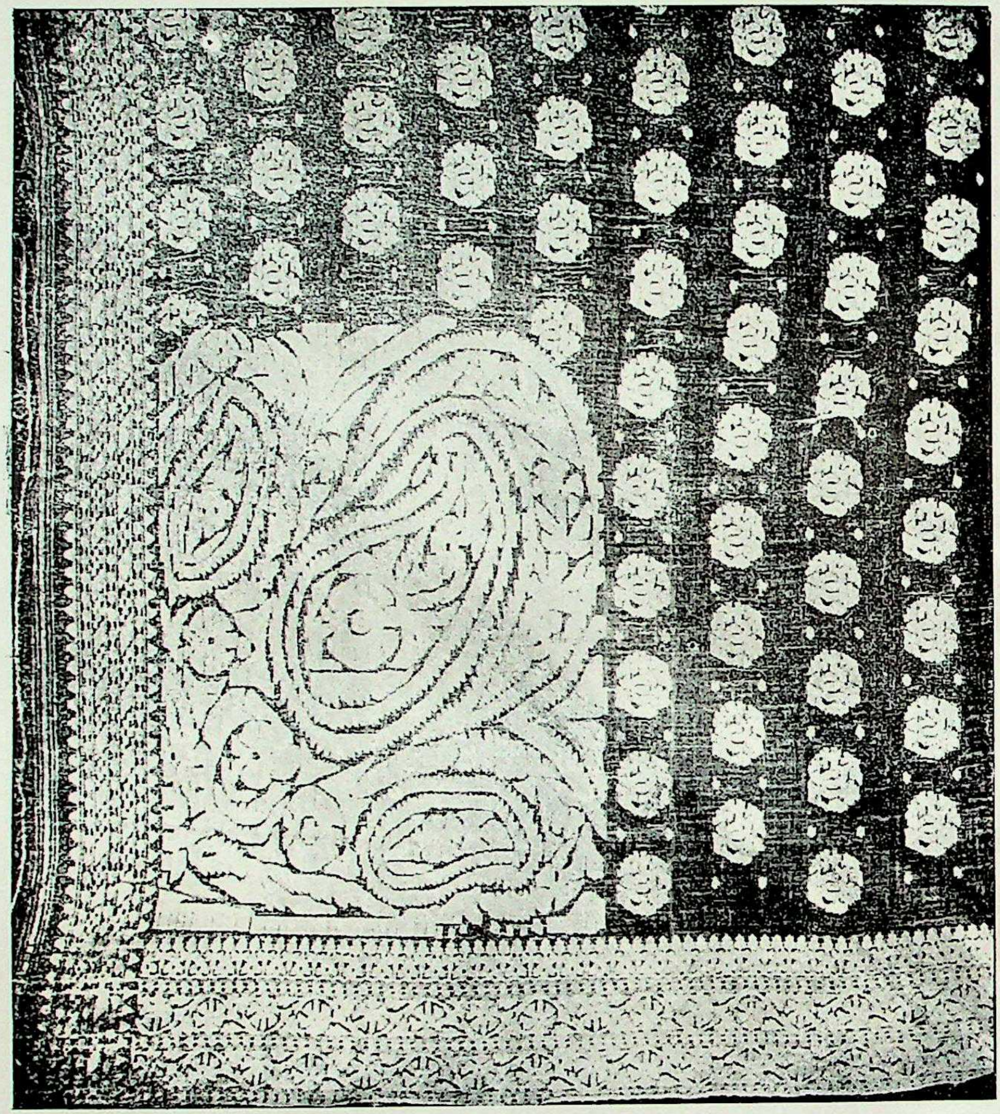

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
फलक—२

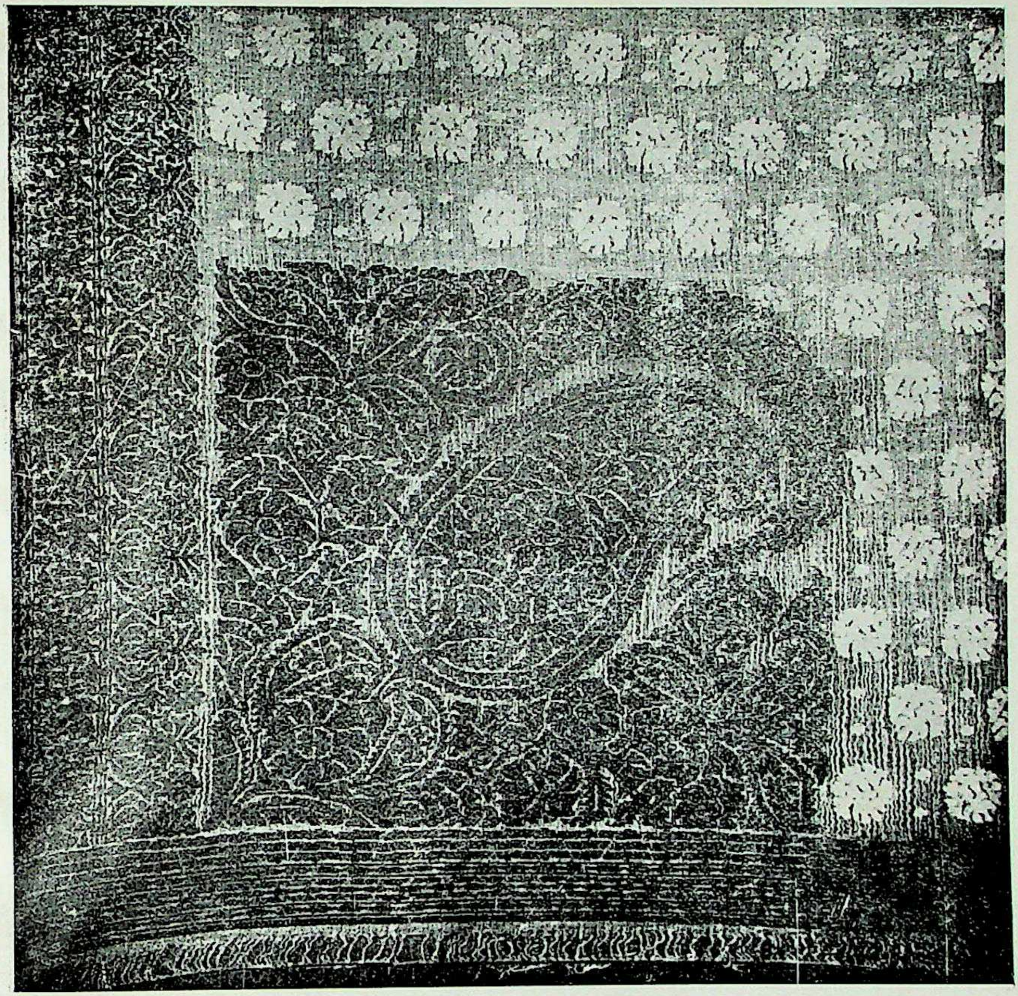

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—४

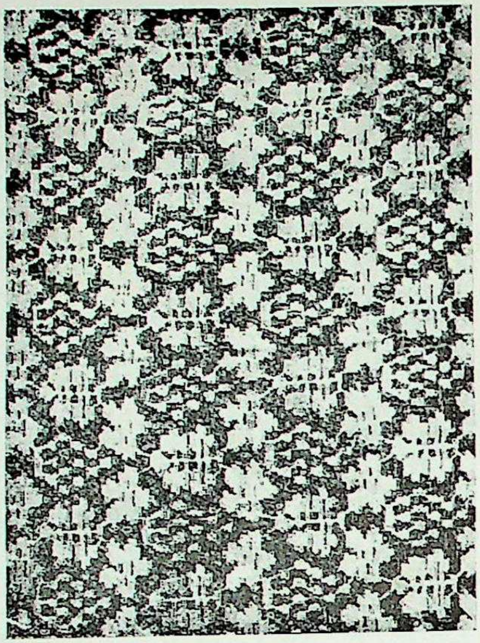

१

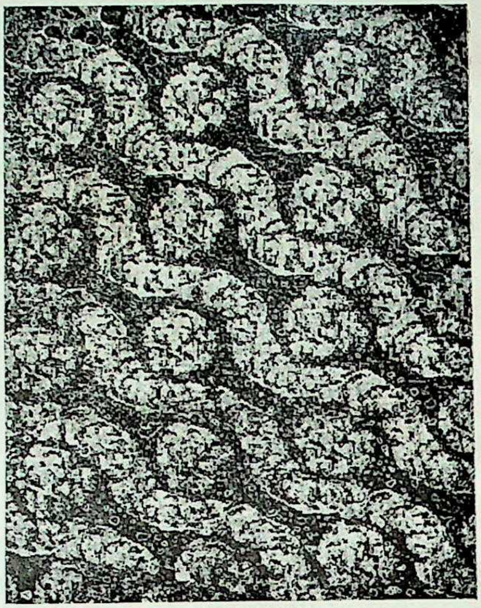

२

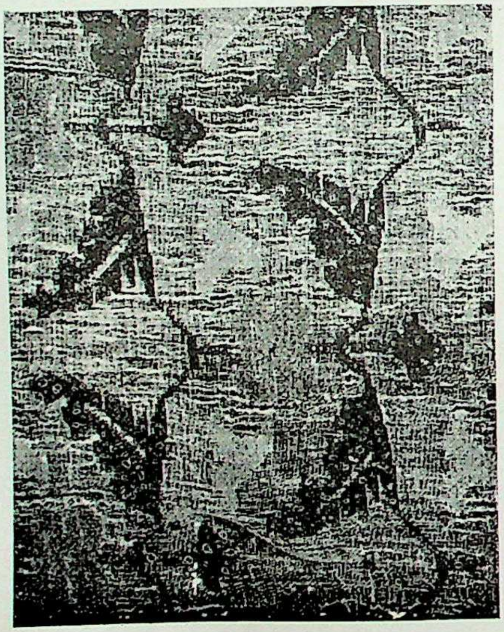

३

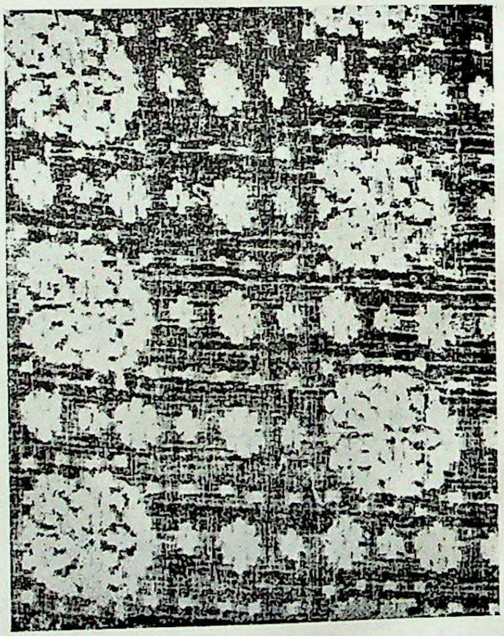

४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—५

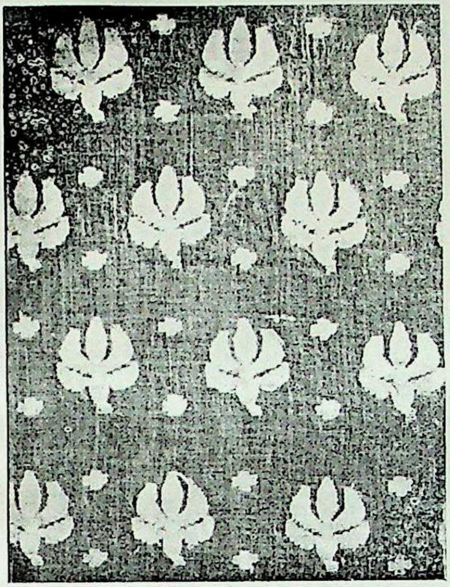

१

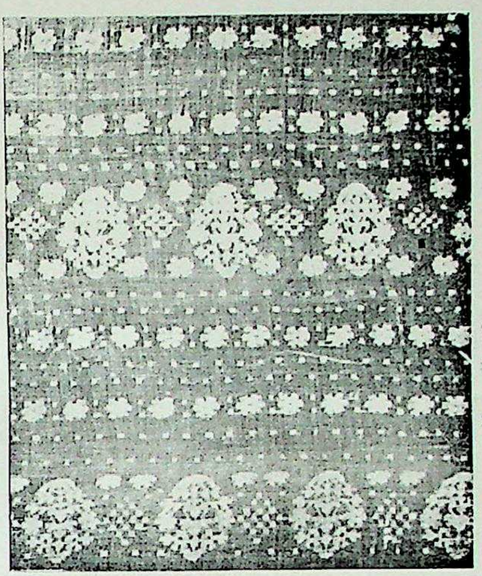

२

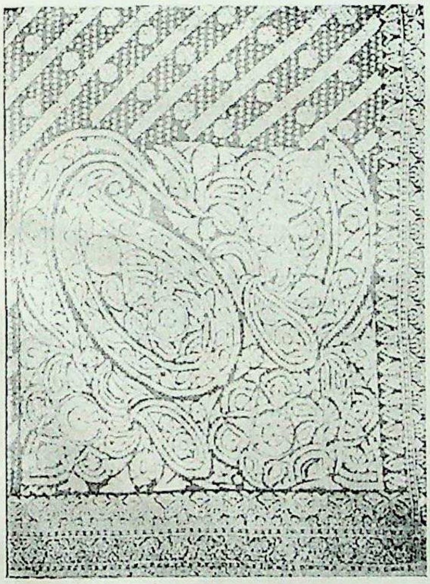

३

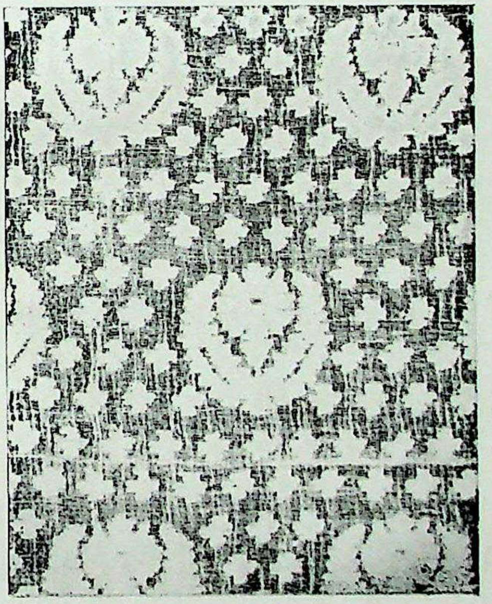

४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—६

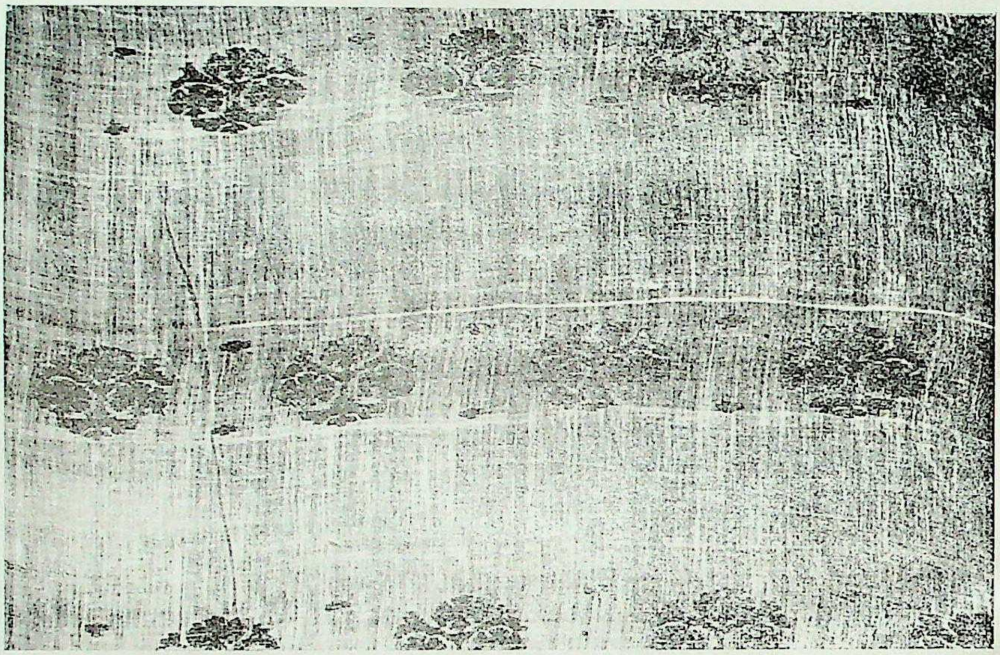

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—७

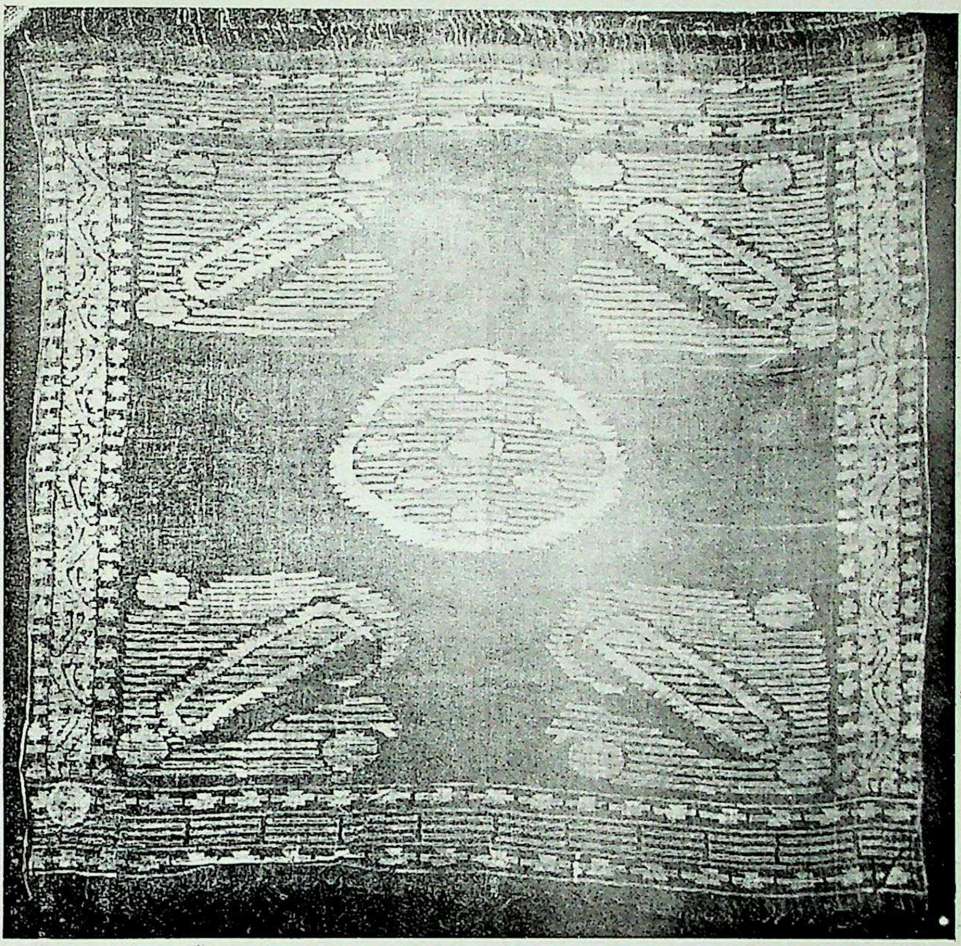

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

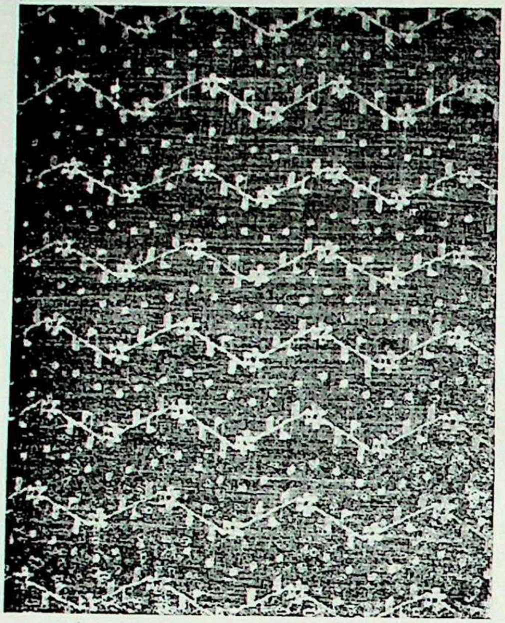

१

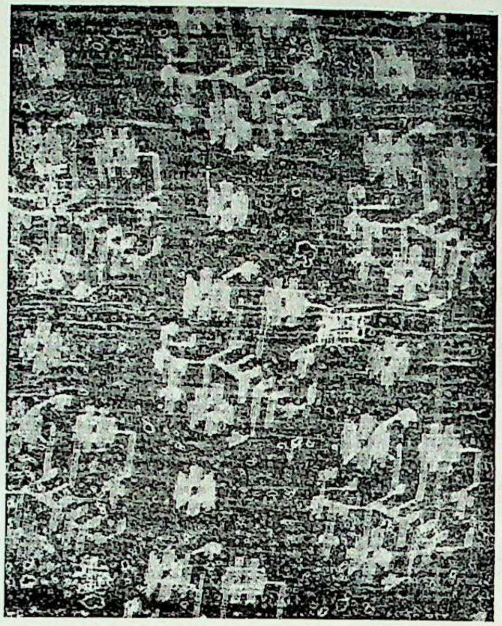

२

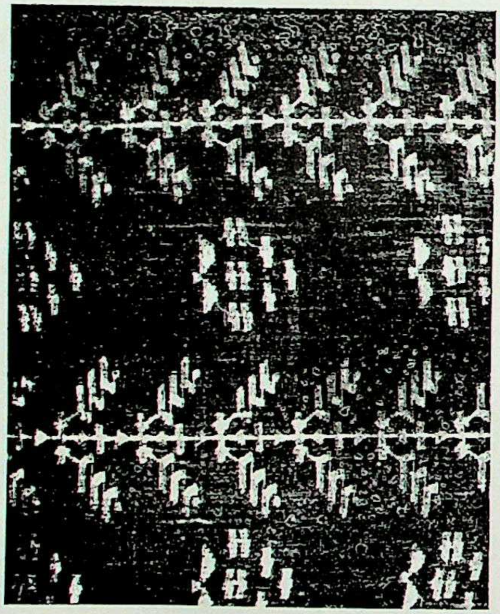

३

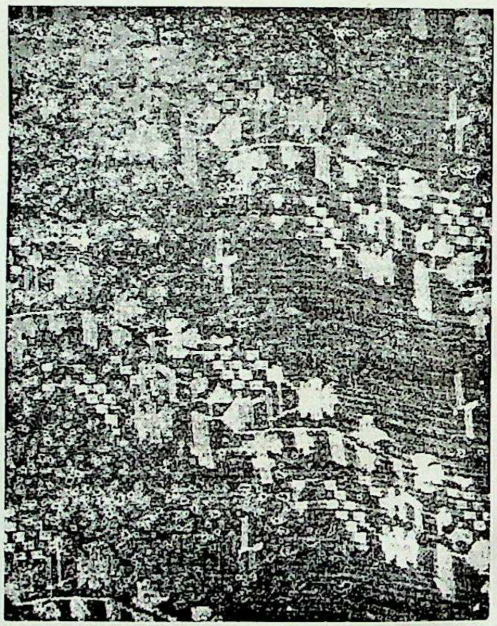

४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—६

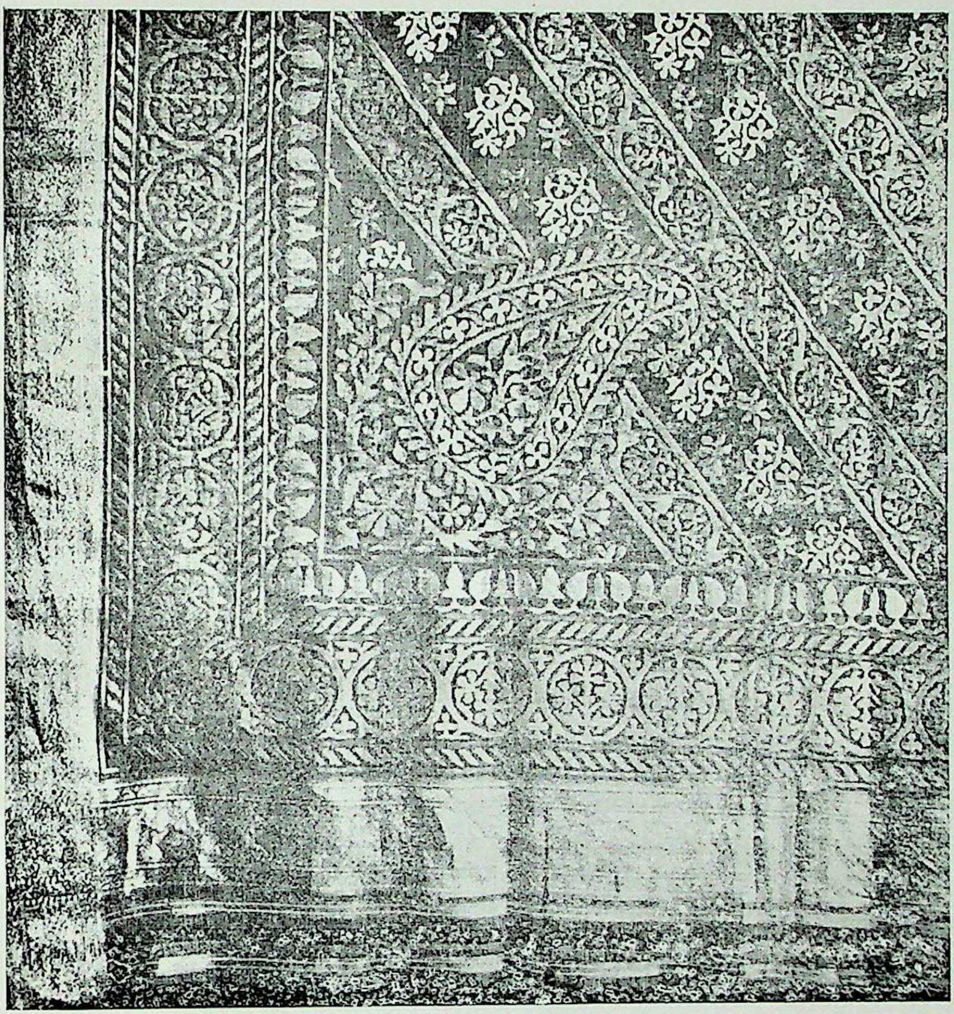

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—१०

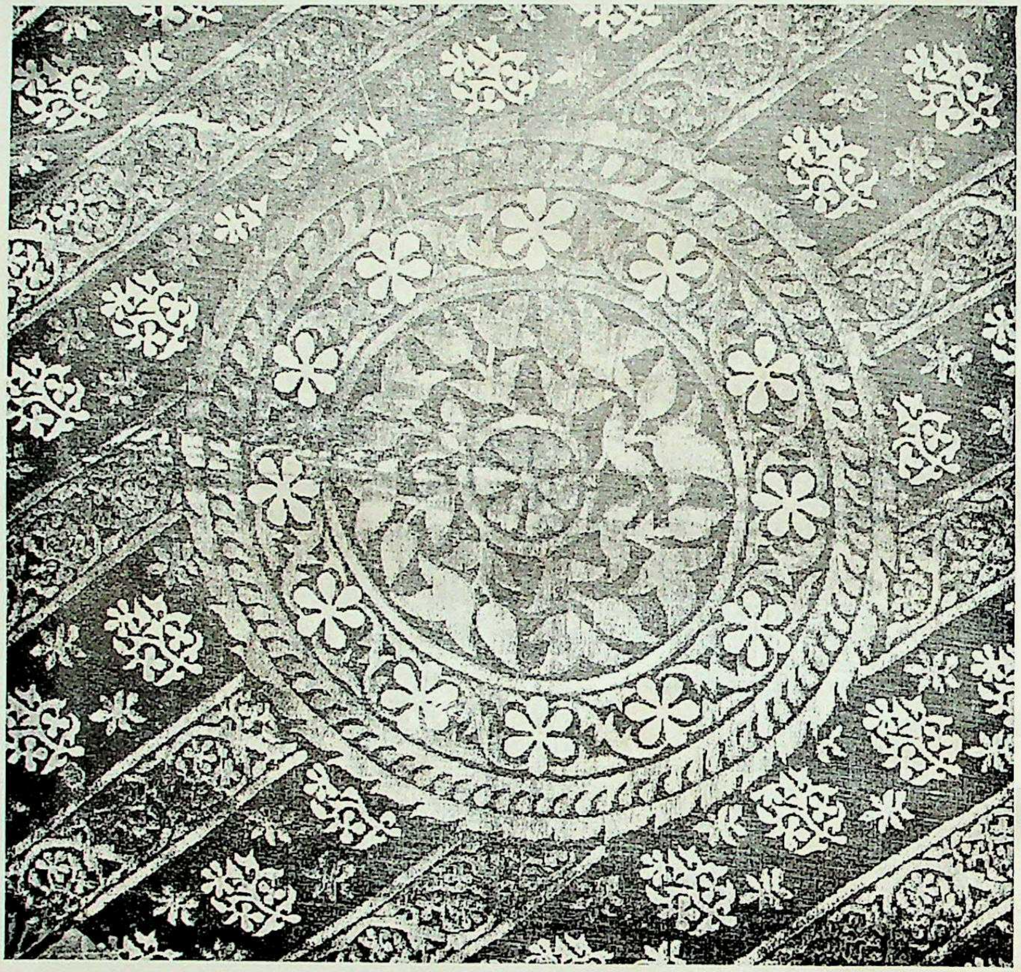

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—११

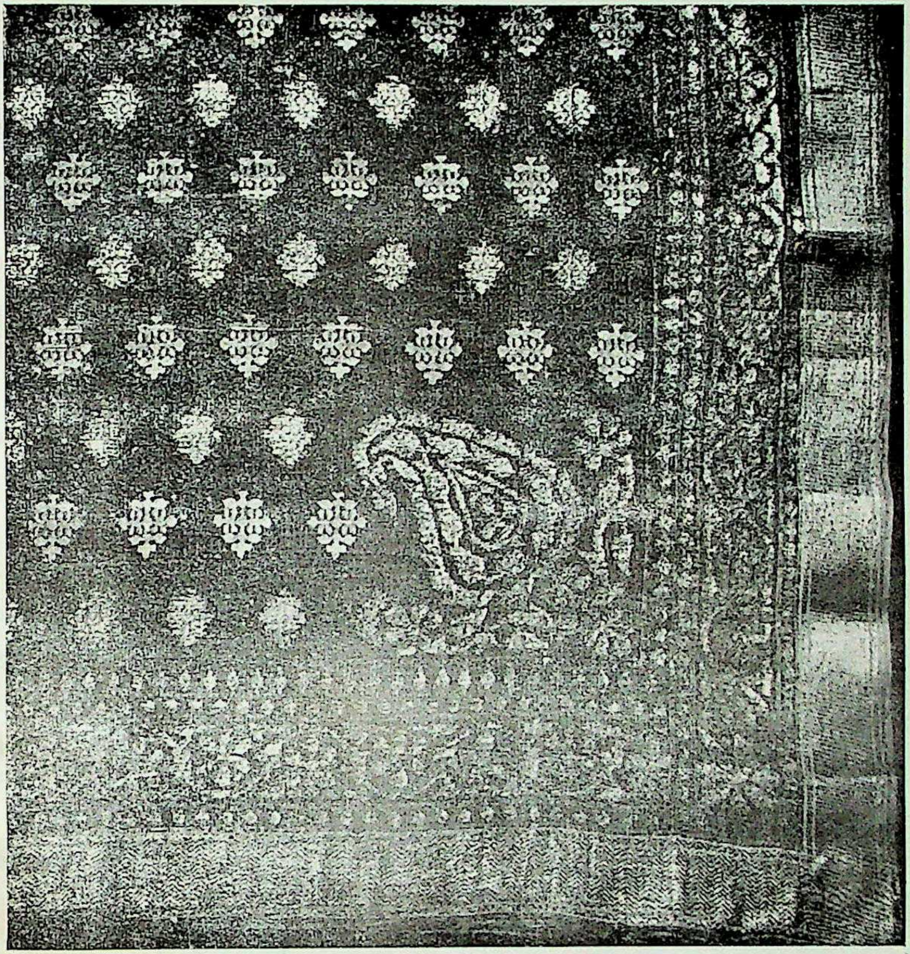

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक—१२

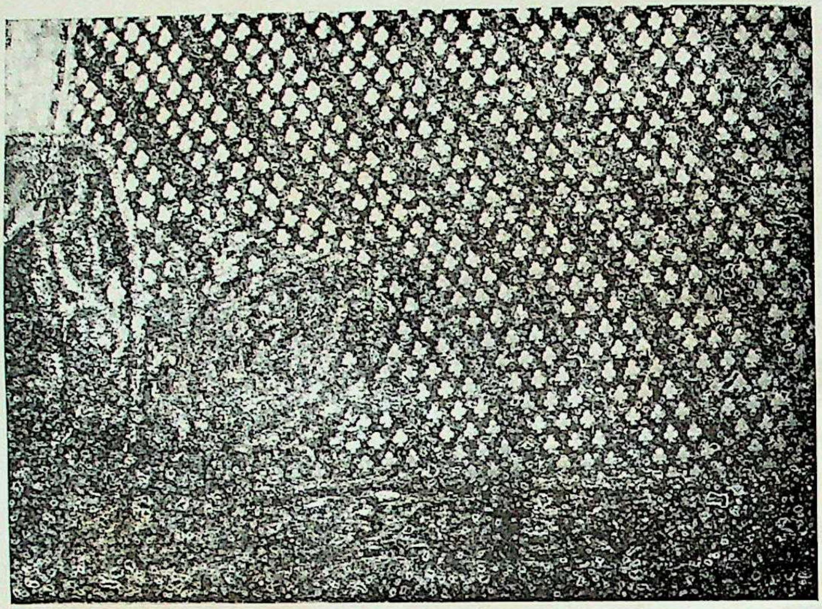

१

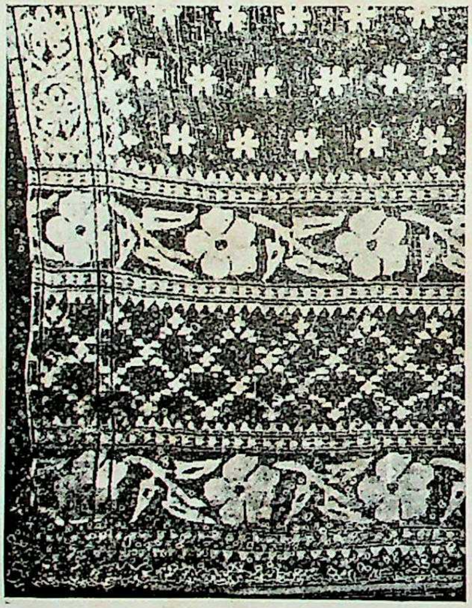

२

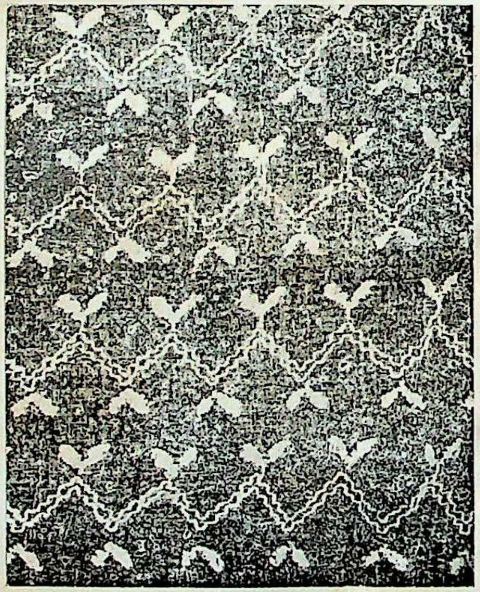

३

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh